सैमुअल अलेक्जेंडर => ये भी विकासवाद का मूल सिद्धान्त लेकर चले है और स्पेंसर के मूल विचारो से सहमत है

! इनके अनुसार आदर्श अवस्था वह है जिसमे समाज के विभिन्न व्यक्ति अपनी विरोधी प्रवृति को संतुलित करके जीवन को सामंजस्यपूर्ण बना लेते हैं

-> इन्होने नैतिक आदर्शों के विकास की प्रक्रिया की व्याख्या नये तरीके से की है, इनका दावा है कि जिस प्रकार प्राकृतिक जगत मे सर्वोत्तम की उत्तरजीविता तथा प्राकृतिक-चयन के नियम लागू होते है वैसे ही नीति मीमांसा मे भी विभिन्न नैतिक आदर्शों मे संघर्ष होता रहता है और अंततः वही सिद्धान्त सुरक्षित रहता है जो सामाजिक कल्याण मे सर्वाधिक सहायक हो।

अंतर यह है कि प्राणियो के संघर्ष मे शारीरिक बल की केंद्रीय भूमिका होती है जबकि नैतिक आदर्शों के संघर्ष मे तर्कों तथा दूसरो को अपनी बातो से सहमत करने का महत्व होता है, हर नैतिक आदर्श का समर्थन कुछ ऐसे व्यक्ति जरुरी करते है जिनके पास उच्च तर्कक्षमता तथा प्रभावी अभिव्यक्ति क्षमता होती है, इनके संघर्ष मे समुचित नैतिक सिद्धान्त विजय होते है

- => नये नैतिक आदर्शों का प्रतिपालन करने वालो को प्रायः रूढ़िवादी सदस्यो का विरोध झेलना पड़ता है यहाँ तक कि उनकी हत्या भी हो सकती है eg- लिंकन, गाँधी, मार्टिन लूथर किंग etc

किन्तु विचार नही मरते और धीरे-धीरे समाज के अधिकांश लोग उन विचारो का महत्व समझने लगते है

मूल्यांकन => ① जैविक जगत के नियमो को नैतिक जगत पर पूरी तरह लागू करना उचित नही है

② अलेक्जेंडर मानकर चल रहे है कि बाद मे विकसित होने वाले मूल्य हमेशा पूर्ववर्ती मूल्यो से बेहतर होते है जबकि वास्तविकता मे ऐसा होना आवश्यक नही है

(लेस्ली स्टीफन) => समाज को महत्व, व्यक्ति को नही
→ निरपेक्ष नैतिकता की स्थिति न आयी है न आयेगी
→ स्टीफन भी स्पेंसर की तरह कई बातों को मानते हैं जैसे
=> सुख ही जीवन का मूल उद्देश्य है
=> नीति मीमांसा की व्याख्या विकासवाद के आधार पर ही की जा सकती है

निम्न विषयों पर स्पेंसर से अलग =>
=> उन्होंने व्यक्ति की तुलना मे समाज को अत्यधिक महत्व दिया जबकि स्पेंसर ने व्यक्तिगत स्वतंत्रता का पुरजोर समर्थन किया था स्टीफन ने समाज को शरीर और व्यक्ति को अंग के रूप मे परिभाषित करते हुये सिद्ध करने का प्रयास किया है जैसे अंग शरीर के अभाव मे अस्तित्व हीन हो जाता है वैसे ही व्यक्ति समाज से पृथक होकर नही जी सकता

नैतिकता का एकमात्र मानदंड सामाजिक कल्याण है व्यक्ति को चाहिए की वह अपने हित को भूलकर केवल सामाजिक हित को साधने का प्रयास करे

=> समाज के विकास की कोई अंतिम स्थिति नही होती, विकासात्मक निरन्तर प्रक्रिया है So निरपेक्ष नैतिकता एक कल्पना है हमें सिर्फ सापेक्ष नैतिकता अर्थात वर्तमान स्थिति को ही सुधारने पर ध्यान देना चाहिए

मूल्यांकन => व्यक्ति को महत्व नही दिया
+ सामाजिक कल्याण को इस तरह प्रस्तुत किया है कि जैसे वह व्यक्तिगत कल्याण के विरुद्ध हो,
सच यह है कि सभी व्यक्तियों का कल्याण ही सामाजिक कल्याण होता है ∴ इनमे कोई विरोध नही है।

(5) जो व्यक्ति नैतिकता और न्याय के इन मूल नियमों का पालन नहीं करते हैं उन्हें दंड दिया जाना नैतिक है, समाज के अस्तित्व का लाभ अगर उन्हें मिलता है तो उनकी यह भी जिम्मेदारी है कि उसके अनुरूप नियमों का पालन करें।

(6) स्पेंसर ने नीतिशास्त्र मे सुखवाद का आधार भी लिया है उसके प्रमुख विचार इस प्रकार है

(I) सुख ही एकमात्र स्वतः साध्य शुभ है, शुभ या अशुभ की व्याख्या सिर्फ सुख की उपस्थिति या अनुपस्थिति के आधार पर हो सकती है सद्गुण भी सुख के आधार पर परिभाषित हो सकते है

(II) सबसे अच्छा आचरण वह है जो अमिश्रित सुख उत्पन्न करें। पर ऐसा आचरण निरपेक्ष नैतिकता के स्तर पर ही सम्भव है जहाँ मनुष्य का वातावरण के साथ पूर्ण सामंजस्य हो जाता है, सापेक्ष नैतिकता में प्रत्येक सुख दुखों के साथ मिश्रित होता है सुखो की उच्चता और निम्नता का फैसला सुख और दुख के Ratio से होता है

मूल्यांकन (1) जैविक नियम तथ्यात्मक होते हैं जबकि नैतिक नियम आदर्शमूलक है तथ्यात्मक नियम से आदर्शमूलक नियम को निकालना तर्कशास्त्रीय भूल है

(2) विकासवाद और सुखवाद का सम्बन्ध उलझा हुआ है स्पेंसर स्पष्ट नहीं कर पाते इनमे से मूल सिद्धान्त कौनसा है।

(3) यह मानकर चलना उचित नहीं है कि मनुष्य लगातार नैतिक दृष्टि से बेहतर दृष्टि की ओर बढ़ रहा है और भविष्य में निरपेक्ष नैतिकता आने वाली है (कई मामलो मे जनजातीय समाज विकसित समाज से बेहतर है)

(4) यह मानना भी गलत है कि विकास के साथ-साथ वातावरण के साथ सामंजस्य बढ़ रहा है अगर ऐसा होता तो ग्लोबल वार्मिंग और ओजोन क्षरण जैसे संकट क्यों उत्पन्न होते।

(+ive → काल्पनिक नहीं ठोस यथार्थपरक आधार)

(4) निरपेक्ष नैतिकता की दशा में समाज को नैतिक मूल्यों पर बल देने की आवश्यकता नहीं होगी but यह अवस्था एक आदर्श मात्र है जो वर्तमान स्थिति से काफी अलग है, वर्तमान स्थिति सापेक्ष नैतिकता की है और उसके लिए नैतिक नियमों की जरूरत पड़ती है

नैतिक नियमों के संदर्भ मे

(5) स्पेंसर के कुछ विचार (a) हजारो वर्षों मे हमारे पूर्वजों ने जिन नैतिक नियमों और सद्गुणो की खोज की है वे समाज की जीवन रक्षा के उद्देश्य पर ही आधारित है अतः सामान्यतः उनका पालन करना उचित है

(b) स्पेंसर, Hobbes और बेंथम की तरह मनुष्य को केवल स्वार्थी नहीं मानते और न ही मार्क्स की तरह उसे मूलतः परार्थी मानते है वह सिजविक की तरह इस विचार से सहमत है कि मनुष्य मे स्वार्थ और परार्थ दोनों प्रवृत्तियाँ होती हैं, केवल स्वार्थ जितना गलत है उतना ही गलत केवल परार्थ भी है, स्वार्थ अपने आप मे बुरी प्रवृत्ति नहीं है क्योंकि इसी के कारण आत्मरक्षा और विकास की प्रेरणाये उत्पन्न होती हैं। व्यक्ति के स्वार्थ को वहीं अनैतिक माना जाना चाहिए जहाँ वह समाज का अहित कर रहा हो —

(न्याय के Points) (c) प्रत्येक व्यक्ति को वहाँ तक पूरी स्वतंत्रता मिलनी चाहिए जहाँ तक उसके कार्य किसी अन्य की स्वतंत्रता मे बाधक न होते हो

(d) प्रत्येक व्यक्ति को उसकी क्षमताओ के अनुसार ही महत्व तथा विकास के अवसर मिलने चाहिए, योग्य व्यक्ति को अधिक अवसर मिलने चाहिए क्योंकि वह अपनी योग्यता के बलबूते समाज के विकास मे अपेक्षाकृत बड़ी भूमिका निभाता है

(e) समाज का जो सदस्य जितना असहाय है उसे बाकी सदस्यों का उतना ही सहयोग और संरक्षण मिलना चाहिए, यह बात मुख्यरूप से बच्चों के पालन-पोषण के संदर्भ मे लागू होती है

(f) संकट की अवस्था मे समाज का अस्तित्व बचाये रखने के लिए कुछ व्यक्तियों की बलि उचित है क्योंकि नैतिकता का मूल उद्देश्य समाज के अस्तित्व को बचाना है

* 19वीं सदी में चार्ल्स डार्विन के विकासवादी सिद्धान्त का प्रभाव Ethics सहित कई विषयों पर पड़ा, इसी प्रभाव के परिणाम स्वरूप एक नई शाखा विकसित हुयी जिसे विकासात्मक Ethics कहा जाता है इसके प्रमुख समर्थकों में हर्बर्ट स्पेंसर लेस्ली स्टीफन और सेमुअल अलेक्जेंडर है इसके अलावा कुछ मात्रा में लॉयड मोर्गन, हेनरी बर्गसाँ, ऑगस्ट कॉम्टे प्रमुख है

स्पेंसर इस दृष्टिकोण के प्रमुख व्याख्याकार है जिनकी धारणा को विकासात्मक सुखवाद भी कहा जाता है उन्होंने सुखवादी आधार लेते हुये विकासवाद के नियमों को नीतिशास्त्र में शामिल किया है

स्पेंसर की विचारधारा ① स्पेंसर ने विकासवाद का वही अर्थ लिया है जो डार्विन ने लिया था अर्थात विकास का अर्थ है सरलता से जटिलता, अव्यवस्था से व्यवस्था तथा एकता से अनेकता की ओर अग्रसर होना, स्पेंसर का दावा है कि विकास का यह नियम सिर्फ जीवशास्त्र पर लागू नहीं होता, इससे समाज तथा नैतिकता के नियम भी निर्धारित होते हैं

② स्पेंसर के अनुसार जीवन का अर्थ है प्रकृति के साथ प्राणी के समायोजन (adjustment) की निरन्तर प्रक्रिया, जो कर्म वातावरण के साथ मनुष्य के समायोजन में सहायक है, वे शुभ है और विरोधी कर्म अशुभ है, शुभत्व की मात्रा भी इसी से तय होती है कि कोई कर्म मनुष्य के अस्तित्व को बचाने या उसके दीर्घ जीवन में कितना सहायक है

③ नैतिकता के विकास की प्रक्रिया के 2 चरण है — सापेक्ष नैतिकता तथा निरपेक्ष नैतिकता

सभ्यता की शुरुआत में सापेक्ष नैतिकता होती है इस समय मनुष्यों का आचरण कम विकसित होता है अर्थात वह प्रायः ऐसा आचरण करते हैं जो समायोजन में बाधक होता है eg- आपस में संघर्ष करना, सहयोग न करना etc धीरे-2 आचरण विकसित होता है और समायोजन बेहतर होने लगता है नैतिक विकास की चरम स्थिति तब आती है जब, व्यक्ति का समायोजन के मूल्यों से पूर्ण सामंजस्य हो जाता है उसका अन्य व्यक्तियों से विरोध पूर्णतः समाप्त हो जाता है और वह सामाजिक हित में ही अपना हित देखने लगता है, व्यक्तिगत हित की पृथक धारणा उसके मन से पूर्णतः समाप्त हो जाती है इसी स्थिति को स्पेंसर ने निरपेक्ष नैतिकता कहा है

(2)

(विकासवाद)

19वीं सदी में विकसित हुआ ⇒ (चार्ल्स डार्विन के समय से)

→ 2 book लिखी < 1859, 1871

{प्रकृति हमें खुद को (प्रूव) Challenge करने का मौका देती है}

- हर्बर्ट स्पेंसर
- लेस्ली स्टीफेन
- सेमुअल अलेक्जेंडर

⇒ **हर्बर्ट स्पेंसर का विकासवाद** ⇒ विकास का अर्थ ⇒ सरल से जटिल की धारणा ⇒ अस्थिर से स्थिर की

: अव्यवस्थित से व्यवस्थित की ओर बढ़ना ; अविकास से विकास की ओर

⇒ वही जिंदा रहेगा जो प्रकृति की चुनौतियों को झेल लेगा,

विकासवादी नीतिशास्त्र

जिंदा वही रहेगा जो प्रकृति की चुनौती का झेल लेगा,

प्रकृति के साथ समायोजन करने वाले मूल्य ⇒ शुभ

जो समायोजन नहीं कर पाते ⇒ अशुभ

प्रकृति को झेलने में सक्षम बनाने वाले कर्म ⇒ नैतिक (vice versa)

- सापेक्ष — नियमों के साथ समायोजन की कोशिश
- निरपेक्ष — हर मनुष्य मन वचन कर्म हर तरह से प्रकृति के साथ समायोजित करने की क्षमता रखता है

सुखवाद — परम सुख

न्याय

न्याय की धारणा विकासवाद पर आधारित होनी चाहिए

⇒ प्रत्येक व्यक्ति को यथासम्भव स्वतंत्रता मिलनी चाहिए

⇒ जो व्यक्ति असहाय है उसकी सहायता करनी चाहिए (सिर्फ होने तक)

⇒ योग्यता के अनुसार व्यक्ति को प्राप्तियाँ होनी चाहिए

⇒ समाज के नियमों का पालन सबको करना चाहिए → नहीं तो दंड देना चाहिए

⇒ संकटकाल में यदि जरूरी हो (समाज को बचाने के लिए) तो कुछ मानवों का बलिदान किया जा सकता है

स्वार्थ - प

↓ मनुष्य मूलतः स्वार्थी है ⇒ मानव ⇒ मूलतः परो...

⇒ सिजविक ⇒ स्वार्थी परार्थी

⇒ स्पेंसर ⇒ स्वि...

समर्थक थे but स्टोइक दर्शन बुद्धि को पूरा महत्व देकर भावनाओं तथा वासनाओं के पूर्ण दमन की बात करता है यह अतिवादी स्टोइकों का अपना है प्लेटो अरस्तू का नहीं

(3) सद्गुण सुख के साधन नहीं है बल्कि अपने आप में साध्य है सद्गुणों का विकास करता और उनके अनुरूप जीता है सुखी है

(4) सुकरात के इस मत का समर्थन करते हैं कि ज्ञान ही सद्गुण है तथा सभी सद्गुण ज्ञान के ही रूप है

(5) सर्वेश्वर वाद का समर्थन करते हैं अर्थात ईश्वर और जगत को अभिन्न मानते हैं इसमें निहित है कि जगत जो कुछ भी होता है ईश्वरी इच्छा से ही होता है अतः मनुष्य को सुख-दुख से पूर्णतः उदासीन रहना चाहिए और हर घटना को ईश्वरी इच्छा के रूप में देखना चाहिए

(6) सिनिक दर्शन की तरह विश्व नागरिकतावाद की स्वीकृती। व्यक्ति सिर्फ अपने नगर राज्य का ही नहीं बल्कि सम्पूर्ण राज्य का नागरिक है

(7) पहली बार मानव मात्र के समानता का समर्थन।। पुरुष या स्त्री, स्वामी या दास सभी मनुष्य समान है

(8) स्टोइको का प्रसिद्ध कथन है, "प्रकृति के अनुसार जीयो" इसका अर्थ यह माना जाता है कि जिस प्रकार प्रकृति ईश्वर के नियमों के अनुसार संचालित होती है वैसे ही मनुष्य को संचालित होना चाहिए

(मूल्यांकन) +ive ⇒ पहली बार मानव मात्र की समानता का विचार
व विश्व नागरिकतावाद की प्रगतिशील विचार है

- ive ⇒ जगत्‌ को ईश्वर की मर्जी पर छोड़ देना व्यक्ति को अकर्मण्य या निष्क्रिय बनाता है
≠ सुख-दुख से पूर्णतः उदासीन होने का आदर्श ...

(5) नैतिक सद्गुणों का विकास करना वांछनीय है but वे स्वयं साध्य नहीं अपितु सुख के साधन हैं वे व्यक्ति और समाज के कल्याण के लिए आवश्यक हैं

eg- अनियन्त्रित वासना → समाज / व्यक्ति → घातक

अतः संयम सद्गुण → " → लाभदायक

(6) नैतिक सुखों की ओर बढ़ने के लिए व्यक्ति को दर्शन का अध्ययन करना चाहिए एपिक्यूरस ने डिमोक्रेटस के परमाणुवाद को आधार बनाते हुये सिद्ध किया कि दर्शन व्यक्ति को मृत्यु के भय तथा ईश्वर/देव के भय से मुक्त कर सकता है इन भयों से मुक्त व्यक्ति ही सच्चे अर्थों में नैतिक हो पाता है

मूल्यांकन → +ive → परिष्कृत सुखवाद अपने आप में एक अच्छा विचार है जो व्यक्ति और समाज दोनों को संतोष प्रदान करता है

- -ive → यह मानना जरूरी नहीं है कि हर व्यक्ति सुख के लिए ही कार्य करता है

→ डिमोक्रेटस के परमाणुवाद को आधार बनाया है but अनीश्वरवादी विचारधारा को सही मानने की कोई आवश्यकता नहीं है

(स्टोइकवाद) ⇒ स्टोइक दर्शन सिनिक सम्प्रदाय का ही परिष्कृत रूप है इसमें संस्थापक जेनो ने कई विचार सिनिक सम्प्रदाय से लेते हुये तथा कुछ नये विचारों के साथ अपनी नीतिमीमांसा दी।

प्रमुख विशेषताएं (1) सुखवाद का पूर्ण निषेध (अरिस्टीपस तथा एपिक्यूरस दोनों के सुखवाद का)

(2) मानव का कल्याण तभी सम्भव है जब वह अपनी सभी वासनाओं और इच्छाओं का दमन करके बुद्धि के आदेशों के अनुसार सद्गुण युक्त जीवन व्यतीत करे, प्लेटो और अरस्तू ~~भी नैतिक पक्ष के~~

(ऐपीक्युरियन वाद) (1) ग्रीक दर्शन के अंतिम दौर में सुखवाद का एक नया रूप उभरा जिसे उसके प्रवर्तक ऐपिक्यूरस के नाम के आधार पर कहा जाता है

वर्तमान में ऐपिक्युरियन होने का अर्थ ऐसे व्यक्ति से लिया जाता है जो शराब, नारी और संगीत में डूबा रहता है किन्तु वास्तविकता यह है कि ऐपिक्युरस वाद अरिस्टीपस के विरुद्ध सुखवाद का विरोध करता है और उदात्त सुखवाद पर बल देता है

महत्वपूर्ण विचार (1) मनोवैज्ञानिक सुखवाद और नैतिक सुखवाद का समर्थन, सुख ही एकमात्र स्वतः साध्य शुभ है शेष सभी सुख सामान्य है,

(2) सुखवादी होने पर भी ऐपिक्युरस वाद अरिस्टीपस के विरुद्ध सुखवाद का विरोध करता है उनका दावा है कि ऐन्द्रिक सुख आवश्यक तो है but लगातार उनके पीछे दौड़ने से मानसिक अशांति पैदा होती है

(3) व्यक्ति को जिस वास्तविक सुख की खोज करनी चाहिए वह Ataraxia वह स्थायी और शांतिपूर्ण मानसिक स्थिति का सुख है, मानसिक सुख, शारीरिक सुख से बेशक कम तीव्र हो किन्तु इसमें स्थायित्व और उच्चता अधिक होती है, साहित्य कला चिंतन और ज्ञान की खोज की प्रक्रियाओं में यह सुख शामिल होता है व्यक्ति को चाहिए कि वह इस सुख की प्राप्ति के लिए शारीरिक ऐन्द्रिक सुखों का त्याग कर दे -

(4) मनुष्य की इच्छाये 2 प्रकार की है, एक वे जो स्वाभाविक व अनिवार्य है eg भूख, प्यास etc

और दूसरी वे जो अनावश्यक है eg अत्यधिक महत्वाकांक्षा या धनलिप्सा etc

अनिवार्य इच्छाओं को पूरा करते हुये व्यक्ति को पूरी कोशिश करनी चाहिए वे कृत्रिम इच्छाओं से मुक्त हो सके.

गौरतलब है कि यही चारों उदाहरण प्लेटो ने भी दिये थे but जहाँ प्लेटो का मुख्य बल न्याय पर था वहीं अरस्तू का विवेकपरक जो व्यक्ति विवेक के अधीन संयम साहस और न्याय को रखते हुये जीवन जीता है वह आत्मा व कल्याण की स्थिति उपलब्ध करता है

कुछ अन्य पक्ष ⇒ (1) अरस्तू ने महिलाओं को अपूर्ण पुरुष कहा है, नारीवादी नीति मीमांसा इसका कड़ा विरोध करती है

(2) अरस्तू ने दासों को मनुष्य नहीं माना है, समतावादी दृष्टि से इस विचार का विरोध किया जाता है

(3) अरस्तू ने व्यक्ति को नैतिक बनाने के लिए राज्य का अत्यधिक समर्थन किया है उसका दावा है कि, "व्यक्ति को व्यक्ति राज्य ही बनाता है" उसके समय में यह विचार संभवतः प्रासंगिक रहा होगा but वर्तमान में राज्य की शक्तियाँ बढ़ना व्यक्ति की स्वतंत्रता व अनैतिक माना जाता है

(मूल्यांकन)

+ive

(1) पहली बार व्यवस्थित विवेचन
(2) अतिवादी विचारों को खारिज करके संतुलित नीति मीमांसा की स्थापना
(3) पूर्णतावाद का विचार प्रारं० प्रा० तौर पर विकसित किया जो 19वीं सदी केन्द्रीय विषय बन गया (प्रारंभिक)

(−ive) 1) ऐच्छिक / अनैच्छिक कर्मों का विवेचन हर स्थिति में कठिन है
eg = तीव्र पीड़ा के भय से कोई व्यक्ति विचलित हो सकता है और कोई नहीं, ऐसी स्थिति में इसे ऐच्छिक माना जाये या अनैच्छिक

2) मध्य मार्ग का सिद्धांत हर जगह लागू नहीं होता eg घृणा और ईर्ष्या जैसे भावों में मध्यवर्ती स्थिति कैसे तय होगी और वह कैसे नैतिक मानी जायेगी

3) महिला को लेकर
[illegible] को लेकर

के दर्शन में पूर्णतावाद कहलाया।

अरस्तू का सद्‌गुण का सिद्धान्त: अरस्तु ने भी सुकरात और प्लेटो की तरह सद्‌गुणों की चर्चा की है but उसका विवेचन कुछ अलग और व्यवस्थित है - उसके प्रमुख विचार निम्न हैं

(a) उसने सद्‌गुणों की परिभाषा देते हुये कहा कि, " सद्‌गुण मनुष्य की ऐसी स्थायी मानसिक अवस्था है जो निरन्तर अभ्यास के फलस्वरूप विकसित होती है और बुद्धि द्वारा निर्धारित उसके स्वैच्छिक कर्मों में व्यक्त होती है-

(b) परिभाषा से स्पष्ट है कि सद्‌गुण जन्मजात नही होते वे कठोर अभ्यास से विकसित होते है वस्तुतः प्रत्येक सद्‌गुण मनुष्य की किसी न किसी इच्छा या वासना को नियन्त्रित करता है जैसे संयम सुख भोग की वासना को और साहस भय को आत्मा को; सद्‌गुण के विकसित होने का अर्थ यही है कि अब वह व्यक्ति किसी वासना या इच्छा के अधीन कोई कर्म नही करेगा, उसके विभिन्न कर्म स्वाभाविक रूप से उसकी बुद्धि के निर्देशन के अनुसार होंगे।

(c) अरस्तु ने सद्‌गुणों के संबंध मे माध्य का सिद्धान्त दिया है जिसके (Mean path) अनुसार, प्रत्येक नैतिक सद्‌गुण 2 अतिवादी दृष्टिकोणों के बीच की अवस्था है. eg- संयम, अनियन्त्रित भोग और पूर्ण वैराग्य वाद के बीच की स्थिति है।

इसी प्रकार साहस आक्रमकता और कायरता के बीच की स्थिति है सार यह है कि सद्‌गुण व्यक्ति को अतिवाद से मुक्त करते है और संतुलन के रास्ते पर चलना सिखाते है

(D) अरस्तु ने सद्‌गुणों को 2 वर्गों में बांटा है, बौद्धिक सद्‌गुण तथा नैतिक सद्‌गुण यह वर्गीकरण आत्मा के 2 पक्षों, बौद्धिक तथा भावनात्मक पर आधारित है आत्मा का भावनात्मक पक्ष इच्छाओं तथा वासनाओं से संबंधित है जो पशुओं मे भी यथा रूप होता है बौद्धिक पक्ष वह विशिष्ट पक्ष है जो मनुष्य को शेष प्राणियों से अलग तथा श्रेष्ठ बनाता है

बौद्धिक सद्‌गुणों मे सबसे imp विवेक है जो सुकरात के ज्ञान के नजदीक है, नैतिक सद्‌गुणों मे सबसे imp 3 है - संयम, साहस और न्याय

१) अरस्तू का दृष्टिकोण एक वैज्ञानिक का दृष्टिकोण है, so उनके चिन्तन में [illegible] समन्वय नजर आती है उन्होंने पहली बार स्पष्ट किया है कि नैतिकता का सम्बन्ध मनुष्य के सभी कर्मों से नहीं होता, जिसे स्वैच्छिक कर्म / [illegible] will कर्म से होता है उसके अनुसार 2 प्रकार के कार्य स्वैच्छिक कर्म नहीं माने जा सकते — (1) बाहरी दबाव में किये गये कर्म
(2) परिस्थितियों से अनजान होने के कारण किये गये कार्य
eg → यदि किसी व्यक्ति ने किसी अनाथ की सहायता करने के लिए उसे कुछ खरीद कर खाने को दिया, खाते ही उसकी मौत हो गयी क्योंकि उसमें जहर था अगर कर्ता को इस सम्भावना का बिल्कुल भी ज्ञान नहीं था तो उसका यह कृत्य अनैच्छिक माना जायेगा

अरस्तू ने स्पष्ट किया है कि सद्गुणों का ज्ञान नहीं होना किसी कर्म को अनैच्छिक नहीं बनाता है eg- कोई भ्रष्टाचार यह कहे कि मुझे इस बात का ज्ञान नहीं था कि कर्मठता एक सद्गुण है तो अपनी अनैतिकता की जिम्मेदारी से मुक्त नहीं हो सकता.

२) नीति मीमांसा का मूल आधार => नीति मीमांसा का मूल प्रश्न है कि सर्वोच्च शुभ क्या है प्लेटो ने शुभ के प्रत्यय को सर्वोच्च शुभ कहा था जो इहलोक में न होकर उससे परे है अरस्तू अपनी नीति मीमांसा को इहलोक तक सीमित रखने का पक्षधर है so उनका दावा है कि सर्वोच्च शुभ आनंद —कल्याण (यूडेमोनिया) है इसका प्रमाण यह है कि हम आनंद की कामना किसी लक्ष्य के साधन के रूप में नहीं करते बल्कि उसे अपने आप में ही वांछनीय मानते हैं

आनंद शारीरिक सुख नहीं है हालांकि इसमें शारीरिक सुख अंतर्निहित है सुखवादी नीति मीमांसा से अलग करते हुये अरस्तू ने आनंद को परिभाषित करते हुये कहा है कि, "यह वह शांतिपूर्ण मानसिक अवस्था है जिसका अनुभव मानव निरन्तर सद्गुण युक्त जीवन व्यतीत करने के परिणाम स्वरूप ही कर सकता है,".

प्रश्न है कि आनंद की प्राप्ति होगी कैसे? अरस्तू का ans है कि जीवन में संतुलन होने से ही इसकी प्राप्ति हो सकती है हमारी आत्मा के 2 पक्ष हैं बौद्धिक तथा भावात्मक इन दोनों के समुचित समन्वय से ही मनुष्य का जीवन आनंद या कल्याण से पूर्ण हो सकता है। यह ध्यान रखना जरूरी है कि भावात्मक पक्ष, बौद्धिक पक्ष के नियन्त्रण में रहे। इन बिन्दु प्लेटो और अरस्तू दोनों का विचार यही है कि बुद्धि के नियन्त्रण में इच्छाओं की तृप्ति करना आदर्श जीवन है

अरस्तु

- पृष्ठभूमि – प्लेटो का शिष्य था
- Ethics की पहली पुस्तक इसी ने लिखी → निकोमेकियन Ethics पहली Book है Ethics की। पूरी निकोमेकस ने की ये book,
- 4000 Books लिखी है
- Eudaimonism / युडेमोनियम Ethics
- निकोमेकस (अरस्तु का बेटा)

? की व्याख्या / ? के जरिए की जाए
↓
आनंद / कल्याण (युडेमोनिया) — Greek word
↓
शुभ का मतलब
- मानसिक सुख → शारीरिक सुख इसका Part
- शांतिपूर्ण / सामंजस्य
⇓
संतुलन → सद्गुणों का विकास

सद्गुण
- परिभाषा Previous topic से देखें
- Theory of Mean
  ↓
  हर सद्गुण 2 अतियों के मध्य की स्थिति है
  ↓
  चरम भोग ← → त्याग / संयम
  ↓
  त्यागपूर्वक भोग करना चाहिए
- आत्मा
  - बौद्धिक पक्ष → बौद्धिक सद्गुण → विवेकशीलता
  - भावनात्मक पक्ष → नैतिक सद्गुण → साहस, संयम, न्याय

(आत्मा का बौद्धिक पक्ष केवल मनुष्य में और भावनात्मक पक्ष तो पशुओं में भी होती है so विवेक को सबसे ज्यादा importance दी गयी है (मनुष्य को सबसे अलग करता है so यह श्रेष्ठ है))

स्वैच्छिक कर्म

1) अरस्तु ने पहली बार नीतिशास्त्र को व्यवस्थित रूप प्रदान किया उसकी पुस्तक निकोमेकियन पुस्तक नीतिशास्त्र की पहली स्वतंत्र पुस्तक मानी जाती है
2) अरस्तु कुछ बिन्दुओं पर सुकरात के नजदीक है कुछ पर प्लेटो से प्रभावित है जबकि कुछ विचारों में वह दोनों से भिन्न रास्ता चुनता है

उसके परिवार का अस्तित्व खतरे मे पड़ सकता है अतः
एक नीतिशून्य कर्म माना जा सकता है

एक दूसरा किन्तु कमजोर तर्क यह भी हो सकता है कि
अधिकारी का आदेश मानना कॉन्स्टेबल की आचरण संहिता का एक
हिस्सा है

सच यह है कि दोनो तर्क मिलकर भी कॉन्स्टेबल के कार्य
नैतिक सिद्ध नहीं कर सकते वे अधिक से अधिक उसके कार्य की
की तीव्रता को ↓ कर सकते है! किसी के जीवन को बचाने के
अधिकारी के अवैध आदेश को अस्वीकार किया जा सकता है
प्रकार कोई व्यक्ति चाहे कितना भी [illegible] हो उसे यह हक नही
जाता कि वह किसी की जान ले ले

(ग) अगर अभियुक्त हिरासत से भाग गया था तो यह पुलिस प्रशासन की कमजोरी है अपने विभाग की कमजोरी को नैतिक रूप से स्वीकारने के बजाए उसके नाम पर किसी की जान लेना बिल्कुल अनुचित है

(घ) कानून के अनुसार एनकाउंटर केवल उसी स्थिति मे जायज है जब पुलिस कर्मचारियो का जीवन खतरे मे हो दी गयी स्थिति से अनुमान होता है कि ऐसा कोई संकट नही है बल्कि योजना बनाकर एनकाउंटर किया जा रहा है

(ङ) यह सिर्फ एक सम्भावना है कि वह कुछ हत्यायें कर सकता है सिर्फ सम्भावना के कारण किसी का जीवन लेना अनैतिक माना जायेगा और नैतिक दृष्टि से तो यह सम्भावना भी हमेशा बनती है कि वह अपनी गलतीयों को स्वीकार कर ले और अच्छा मनुष्य बन जाए

(च) अगर सुराग मिल ही गया है तो उसे गिरफ्तार किया जा सकता है और सम्भावित हत्याओ को अंजाम देने से रोका जा सकता है,

(छ) पुलिस की ~~नैतिक~~ नैतिकता की दृष्टि से यह गलत है क्योंकि उसके गिरफ्तार होने मे सम्भावना है कि वह कई सम्भावित अपराधो या छिपे हुये अपराधो की जानकारी दे सकता है जबकि उसे मार देने से यह लाभ नही मिलेगा. Extra: जीवन का अधिकार एक मूल अधिकार है जिसे छीनने का हक कानून के सिवा किसी को नही है।

Q.(3) कांस्टेबल को नैतिक मानने का एक ही तरीका है कि उसके इस कार्य को स्वैच्छिक कार्य न माना जाए, नैतिकता के नियम सिर्फ स्वैच्छिक कार्यो पर लागू होते है अनैच्छिक कार्यो पर नही, अनैच्छिक कार्यो (जिन्हे नीतिशून्य या नीति तटस्थ कार्य भी कहा जाता है) मे ऐसे कार्य भी शामिल किए जाते है जो असहनीय दबाव के तहत किये गये हो। चूँकि कांस्टेबल की नौकरी खत्म होने का खतरा है और [illegible]

(2) कांस्टेबल के एनकाउंटर में हिस्सा लेने को किस आधार पर नैतिक माना जा सकता है।

Soln (3) कांस्टेबल अपनी जिम्मेदारी से बच नहीं सकता और अगर वास्तव में उसे कुछ अक्षमता नहीं है तो

Sir का Formula => एनकाउंटर किसी भी आधार में नैतिक नहीं है

Sol (1) इस परिस्थिति मे निम्न नैतिक Qus शामिल हैं -

(1) DCP को कानून द्वारा निर्धारित प्रक्रिया का पालन करना चाहिए या अपने अंतर्मन के आधार पर अभियुक्त को मारने का निर्णय करना चाहिए

(2) DCP को अपने अधीनस्थों के साथ कैसा व्यवहार करना चाहिए - उन्हें गुलामों की तरह समझना चाहिए या संकल्प स्वातंत्र्य से युक्त नैतिक प्राणीयों के रूप में

(3) कांस्टेबल को अपने Pro. Ethics अर्थात अपने सीनियर की आज्ञा का पालन करना और अपने सामाजिक नैतिक मानदण्डों तथा अंतर आत्मा (अर्थात अनावश्यक रूप से किसी भी मनुष्य की हत्या नहीं की जानी चा... मे से किसका पालन करना चाहिए

(4) एक मुद्दा यह भी है कि DCP की कार्यवाही पुलिस प्रशासन और समाज कैसा प्रभाव डालेगी & वह प्रभाव नैतिकता को बढ़ायेगा या अनैतिकता को

Soln (2) कानूनी दृष्टि से गलत होना और नैतिक दृष्टि से गलत होना एक साथ हो भी सकता है और नहीं भी किन्तु इस स्थिति मे ये दोनों निर्णय एक जैसे होंगे, DCP के एनकाउंटर ~~के निर्णय को नैतिक~~ आधार पर सही नहीं माना जा सकता क्योंकि

(क) अभियुक्त पर कई मुकदमें चल रहे हैं किन्तु यह सूचना नहीं दी गयी है कि वह अपराधी सिद्ध हो चुका है। ऐसी स्थिति मे तो राज्य को भी हक नहीं है कि वह उसका जीवन छीने

(ख) हो सकता है कि न्यायालय अभियुक्त को अपराधी मानते हुये भी मृत्युदंड की आवश्यकता न समझे ऐसी स्थिति मे एनकाउंटर और हत्या मे कोई अंतर नहीं रहेगा

Date 7/11/2013

(निरपेक्षवाद)

कोई चीज किसी भी अन्य चीज से प्रभावित नहीं होती है

नैतिक नियम या कोई भी नियम किसी चीज से नहीं बदल सकता

(सापेक्षवाद)

कोई चीज किसी भी अन्य चीज से प्रभावित है

नैतिक नियम किसी अन्य चीज से बदल सकता है

Case Study

गब्बर सिंह इलाके का जाना-माना अपराधी है जिसपर कई मुकदमे चल रहे हैं और वह जेल से फरार हो गया है, इस बात की पूर्ण सम्भावना है कि वह कुछ हत्याओं को अंजाम दे सकता है

चुलबुल पांडे इलाके के D.C.P है और उन्हें सुराग मिला है कि गब्बर कहाँ छिपा हुआ है, उन्हें कानूनी अनुशासन में विशेष रुची नहीं है वे मानते है कि अदालत की लम्बी प्रक्रिया में अपराधी बच ही जाता है इसलिए वो कई मौकों पर एनकाउंटर कर चुके हैं और आज भी एनकाउंटर की योजना बना ली है उनके अधीनस्थ पुलिस अधिकारी उनसे बहुत डरते हैं ~~क्योंकि वे उनमें नियन्त्रण कैसा रखते थे~~

एनकाउंटर टीम में एक कांस्टेबल है जिसका नाम तिवारी जी है वह मन से नहीं चाहता कि एनकाउंटर का हिस्सा बने but DCP का दबाव इतना अधिक है अगर वह भाग नहीं लेगा या किसी को शिकायत करेगा तो उसका निलम्बन या बर्खास्त तय है

इस परिस्थिति के आलोक में निम्न प्रश्नों पे विचार करें

1) इसमें कौन-2 से नैतिक मुद्दे शामिल है

2) यद्यपि एनकाउंटर कानूनी दृष्टि से गलत है पर क्या इसे नैतिक दृष्टि से उचित माना जा सकता है अगर हाँ तो किन तर्कों के आधार पर.

सेरेनाइको के नैतिक सुखवाद को खारिज करते हुये प्लेटो ने लिखा है कि हर सुख का शुभ होना आवश्यक है
तीव्र वासनाओ, इच्छा या घृणा से प्रेरित सुख, नैतिक अशुभ उत्पन्न कर सकते है, वे ही सुख नैतिक है वे विवेकशील आचरण के अन्तर्गत किए गये है

(मूल्यांकन) (+ive): भावना और बुद्धि को समुचित महत्व दिया
+ निकृष्ट सुखवाद का तार्किक विरोध → जो आवश्यक था
+ हीगल जैसे दार्शनिको के लिए आधार सामग्री की तरह
(-ive) + प्रत्यय सिद्धान्त → काल्पनिक सिद्धान्त → जिसपर नीति मीमांसा को आधारित करना गलत। इससे परलोकवाद हावी होता है
+ अगर शुभ का प्रत्यय सभी प्रत्ययो मे अभिव्यक्त होते और प्रत्यय ही वस्तुजगत मे अभिव्यक्त होते है तो Que है कि जगत मे अशुभ परिस्थितियाँ होती ही क्यो है, इस Q का तार्किक समाधान प्लेटो के दर्शन मे नही है

विभिन्न प्रत्ययों मे समन्वय स्थापित करने वाला शुभ का प्रत्यय है जो सम्पूर्ण नैतिकता का मूल आधार है यह सभी प्रत्ययों में व्यक्त होता है
प्लेटो का यह विचार सुकरात के विचारों से मिलता-जुलता है -
(क) ज्ञान ही सद्गुण है
(ख) ज्ञान ही अन्य सद्गुणों के रूप में व्यक्त होता है

∴ सुकरात की तरह प्लेटो ने भी नीति मीमांसा मे सद्गुणों को विशेष महत्व दिया है, उसने 4 सद्गुणों को नैतिक सद्गुणों का आधार माना है - विवेक, साहस, संयम, न्याय, पहले 3 का सही अनुपात होने पर न्याय तथा सामंजस्य का सद्गुण (सर्वोच्च सद्गुण) उत्पन्न होता है, इस संबंध की व्याख्या प्लेटो ने व्यक्ति और राज्य दोनो स्तरों पर की है -

(क) व्यक्ति के स्तर पर उनका मत है कि जो व्यक्ति अपने साहस और संयम को विवेक की अधीन रखता है उसमें न्याय सद्गुण उत्पन्न हो जाता है ऐसा व्यक्ति विवेकपूर्ण आचरण करता है, साहस द्वारा बाधाओं पर विजय प्राप्त करता है और संयम द्वारा वासनाओं पर नियन्त्रण रखता है

(ख) राज्य के स्तर पर 3 वर्ग है - (1) प्रशासक वर्ग - विवेक का प्रतिनिधि
(2) सैनिक ״ - साहस ״ ״
(3) व्यापारी ״ - वासना/संयम ״ ״

अगर तीनो वर्ग एक दूसरे के काम मे हस्तक्षेप न करें और सैनिक तथा व्यापारी वर्ग प्रशासक वर्ग के निर्देशों के अधीन रहें तो राज्य न्यायपूर्ण होता है, चूँकि सैनिक वर्ग के लोग क्रोध मे, तथा व्यापारी वर्ग के लोग लोभ मे अंधे हो सकते है, इसलिए उनपर दार्शनिक राजा अर्थात विवेकशील प्रशासक का नियन्त्रण आवश्यक है

∴ प्लेटो ने सेरेनाइक सम्प्रदाय के अंधे सुखवाद का तथा सिनिक सम्प्रदाय के कठोर वैराग्यवाद दोनो को एकांगी मार्ग बताते हुये खारिज किया है उनका मानना है कि मनुष्य को आनंद और संयम का समन्वय करना चाहिए उसे मानसिक और शारीरिक दोनो सुखो की प्राप्ति करनी चाहिए किन्तु विवेक की बुद्धि अधीन रहते हुये, मानसिक सुखो को शारीरिक सुखों से अधिक महत्व देना सही है

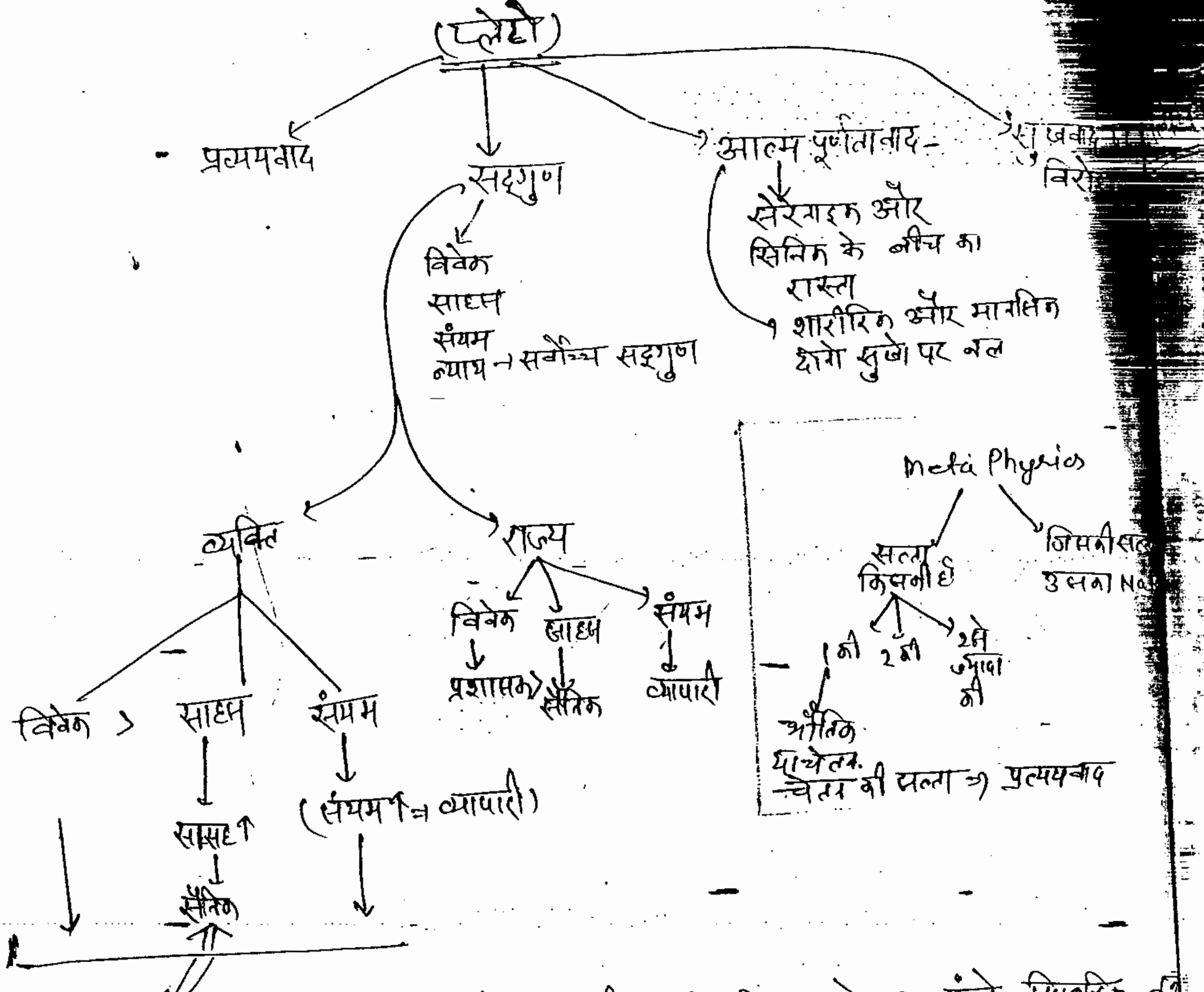

(न्याय) :- प्लेटो की नीति मीमांसा की अभिव्यक्ति उनके 2 ग्रंथों रिपब्लिक और फिलेबस में हुयी है उन्होंने सेरेनाइक और सिनिक के अतिवादी मार्गों का विरोध करते हुये पहली बार पूर्णतावाद का विचार दिया जिसके अनुसार मनुष्य को संतुलित और सामंजस्य पूर्ण जीवन जीना चाहिए, यही विचार आगे चलकर हीगल, ग्रीन और ब्रेडले जैसे प्रत्ययवादी विचारकों में भी दिखाई पड़ता है

:- प्लेटो ने नीति मीमांसा को अपने प्रत्ययवाद के आधार पर स्थापित किया है उनका दावा है कि न्याय, संयम, साहस, सौन्दर्य जैसे सद्गुणों का आदर्श रूप प्रत्यय जगत में प्रत्ययों के रूप में विद्यमान है

प्रत्ययों का ज्ञान बुद्धि के चरम स्तर पर होता है। केवल बुद्धिमान व्यक्ति को साधना के द्वारा प्रत्ययों को जान पाते हैं किन्तु प्रत्यय का ज्ञान प्राप्त करते ही व्यक्ति स्वयं उन सद्गुणों से युक्त हो जाता है, जो इन सद्गुणों को जान लेता

(चार्वाकों से तुलना) → धूर्त चार्वाक

...सम्प्रदाय → सुखवादी सिद्धान्त

→ समाज का अस्तित्व खतरे में पड़ जाता है

(सिनिक) नीति मीमांसा

सिनिक की विचारधारा का प्रवर्तक सुकरात के बाद ऐंटीस्थिनीज तथा डायोजिनीज ने किया सेरेनाइको के समान इनका भी मानना था कि ये सुकरात के अनुयायी है, सुकरात ने आनंद के सन्दर्भ मे बुद्धि द्वारा वासनाओ के नियन्त्रण की बात कही थी, उसी को आधार बनाकर सिनिक सम्प्रदाय का विकास हुआ

विचार → (1) विशुद्ध बुद्धिवाद तथा कठोर वैराग्यवाद में विश्वास

(2) मनुष्य को शारीरिक तथा मानसिक सुखो की इच्छा का पूर्ण त्याग करना चाहिए क्योंकि सुख की कामना उसे अपना गुलाम बना देती है ऐंटीस्थिनीज का कथन है कि "सुख की कामना से वशीभूत होने से अच्छा है पागल हो जाना"

(3) मानवजीवन का उद्देश्य सुख प्राप्त करना नहीं है बल्कि विवेक, ज्ञान तथा सद्गुणो से युक्त जीवन जीना है

(4) सद्गुणो के विकास मे दुखो की विशेष महत्ता है, कष्टपूर्ण जीवन जीने से आत्मसंयम तथा विवेकशीलता जैसे गुण विकसित होते है जो सुखपूर्ण जीवन मे नही हो सकते

(5) सिनिक सम्प्रदाय मे पहली बार विश्व नागरिकता का समर्थन किया गया उन्होने कहा कि व्यक्ति सिर्फ अपने नगर, राज्य या राष्ट्र का नागरिक नही होता, वह सम्पूर्ण विश्व का नागरिक है, अगर उसके राज्य का कोई कानून उसके विवेक के विरूद्ध है तो उसे उसका विरोध करना चाहिए

मूल्यांकन → -ive

1 एकतरफा दृष्टिकोण।

2 इतना कठोर सिद्धान्त समाज मे व्यवहारिक स्तर पर नही चल सकता।

(+ive)

1 विश्व नागरिकता का विचार मौलिक और प्रगतिशील है

...

सुकरात ने सुख और आनंद मे स्पष्ट भेद नही किया है but कथनो से प्रतीत होता है कि वे शारीरिक सुख की तुलना मे मानसिक और बौद्धिक आनंद को ज्यादा महत्व देते है सद्गुणो के विकास का प्रयोजन इस आनंद की प्राप्ति है

मूल्यांकन → (1) अरस्तू का आक्षेप है कि नैतिक व्यवहार के लिए ज्ञान पर्याप्त नही है उसके अनुसार आचरण होना भी जरूरी है

(2) सद्गुणो की एकता के सिद्धांत मे भी समस्या है, eg अगर कोई व्यक्ति साहसी but अन्यायी हो तो इन दोनो पक्षो को ज्ञान सद्गुण का व्यक्त रूप कैसे माना जा सकता है।

वस्तुतः यह दोनो आलोचनायें कमजोर है सुकरात ने ज्ञान का जो अर्थ लिया उस स्तर पर न तो आचरण की समस्या बचती है और न ही अंतर्विरोध उनका योगदान यह है कि इन्होने नैतिकता मे वस्तुनिष्ठता की स्थापना की और सद्गुण नीतिशास्त्र के रूप मे एक नयी शाखा को भी विकसित किया

(सेरेनाइक विचारधारा) → सेरेनाइक सम्प्रदाय, जिसके प्रवर्तक अरिस्टीपस थे का दावा है कि उसकी नीति मीमांसा सुकरात के विचारो पर आधारित है इन्होने सुकरात के सद्गुण संबंधी विचारो पर नही बल्कि सुख और आनंद सम्बन्धी विचारो पर ध्यान केन्द्रीत किया और निकृष्ट स्वार्थमूलक सुखवाद की स्थापना की

प्रमुख विचार → मनो-वैज्ञानिक सुखवाद

- नैतिक सुखवाद → सुख ही एकमात्र शुभ है
- सुखो मे गुणात्मक भेद नही सिर्फ मात्रा भेद
- शारीरिक सुख मानसिक सुख से बेहतर, क्योंकि अधिक संतुष्टीदायक (अधिक तीव्र)
- तात्कालिक सुख > दूरवर्ती सुख
- निश्चित सुख > अनिश्चित सुख
- सिर्फ उसी सुख का त्याग करना चाहिए जिसका परिणाम दुखदायी हो।।
- विवेक, ज्ञान तथा सद्गुणो का महत्व केवल वही तक है जहाँ वे सुख प्राप्त करने के साधन है।

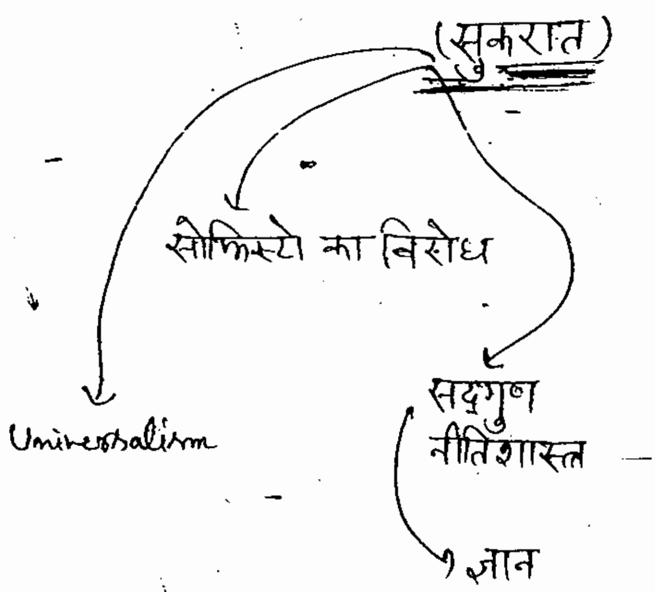

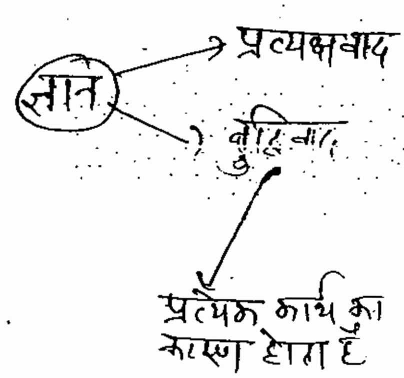

सुकरात का मूल उद्देश्य ऐसी सार्वभौमिक नीति मीमांसा की स्थापना करना था जो विभिन्न व्यक्तियों या देशकाल की परिस्थितियों से प्रभावित न हो वे सोफिस्टो द्वारा प्रचारित आत्मनिष्ठतावादी और सापेक्षतावादी नीति मीमांसा से असंतुष्ट थे क्योंकि उसके आधार पर किसी भी कार्य को नैतिक या अनैतिक ठहराया जा सकता है, सुकरात अपने बुद्धिवादी तेवर के अनुरूप नीति मीमांसा मे भी अनिवार्यता और निश्चयात्मकता की खोज कर रहे है

सुकरात ने सद्‌गुणो को नैतिकता का प्रतिमान माना है सद्‌गुण वे गुण है जो कठोर अभ्यास से विकसित होते है और व्यक्ति के भीतर यह क्षमता पैदा करते है कि वह अपनी वासनाओ या इच्छाओ को अपने विवेक की अधीन रख सके

साहस सद्‌गुण का अर्थ है भय की भावना को नियंत्रित करने का स्थायी गुण जो बार- बार ऐसी परिस्थितियो मे किये गये अभ्यास से विकसित होता है

सुकरात ने ज्ञान को प्रमुख सद्‌गुण माना है किन्तु ज्ञान का अर्थ सिर्फ जानना या जानकारी रखना नही है, ज्ञान का वास्तविक अर्थ है- शुभ, अशुभ सत्य असत्य, न्याय अन्याय, कर्तव्य अकर्तव्य मे भेद कर पाने की क्षमता। ज्ञान सद्‌गुण तब बनता है जब वह चेतना का हिस्सा न रहकर अंतरीकृत हो जाता है और प्रत्येक आचरण मे व्यक्त होने लगता है सभी नैतिक बुराईयाँ अज्ञान से ही पैदा होती हैं क्योंकि ऐसे व्यक्ति शुभ - अशुभ मे भेद करना नही जानते, समाज को नैतिक बनाने का एक ही रास्ता है और वह यह है कि कठोर अभ्यास द्वारा व्यक्तियों में ज्ञान सद्‌गुण का विकास किया जाए

विभिन्न सद्‌गुणो के संबंध को स्पष्ट करने के लिए सुकरात ने "सद्‌गुणो की एकता का सिद्धान्त" प्रस्तुत किया है इसके अनुसार ज्ञान एकमात्र सद्‌गुण है शेष सद्‌गुण साहस, संयम, न्याय, विवेक आदि

इस आत्मनिष्ठता का चरम स्तर गार्जियस के
कथनों में दिखता है जहाँ वे वस्तुनिष्ठता का पूर्णतः विरोध करते हैं
- वस्तुनिष्ठ सत्य है ही नहीं
- अगर है भी तो हम जान नहीं सकते
- अगर जान ले तो किसी को बता नहीं सकते

सोफिस्टों पर यह भी आक्षेप है कि उन्होंने नैतिक मानदंडों की व्याख्या आदर्शों की बजाए व्यवहारिक स्तर पर की जिसके परिणाम स्वरूप शक्तिशाली लोगों के नैतिक सिद्धान्त स्थापित हुये थ्रेसीमेकस ने न्याय की परिभाषा देते हुये कहा शक्तिशाली का हित ही न्याय है, एक अन्य सोफिस्ट कैलीकलस ने भी इस का समर्थन किया, इसका अर्थ है कि शक्तिशाली लोग अपने हितों के अनुसार बनाते हैं और कमजोर लोगों को उसका पालन करना पड़ता है, प्लेटो ने थ्रेसीमेकस इस सिद्धान्त को खारिज किया है

सोफिस्टों ने प्रायः ईश्वर तथा पारलौकिक सत्ताओं का खंडन किया और इहलौकिक आधार पर तत्व मीमांसा की तरह नीति मीमांसा की तरह गहराई की किया यह सही है कि उनकी नीति मीमांसा में वस्तुनिष्ठता और but उन्हें यह श्रेय अवश्य है कि उन्होंने पहलीबार मानववादी, उपयोगितावादी सुखवादी, तथा परिणाम सापेक्षवादी नीति मीमांसा का मार्ग स्वच्छ किया

सोफिस्टों के मूल ग्रंथ उपलब्ध नहीं है प्रायः प्लेटो के ग्रंथों से ही उनके में जानकारी मिलती है इस सम्भावना से इनकार नहीं किया जा सकता कि जानकारी प्लेटो के अपने पूर्वाग्रहों से प्रभावित हुयी हो

(सोफिस्ट Ethics) :

- → 5th Cen. B.C.
- → तार्किक थे → व्यावहारिक शिक्षा देते थे (ग्रीस में)
- → प्लेटो ने इन्हें आध्यात्मिक दुकानदार कहा
- → नगर राज्यो मे अलग-2 सरकारे थी
  - ↓ (S. व्यावहारिक शिक्षा की वकालत की)
- ↓ प्रोटागोरस → (Homo Mensura) ⇒ मनुष्य ही सभी वस्तुओं का मापदंड है (Man is the measure of all things)
  - गार्जियस
  - थ्रेसीमेकस
- ↓ Homo Mensura → मानव (व्यक्ति) के अनुसार सब चीजे तय होंगी
- → Ethics
  - → आत्मनिष्ठतावाद
  - → सापेक्षतावाद
  - → ये पर लोक को स्वीकार नही करते है
  - → इहलौकिक आदर्शों पर बल
  - → धर्मनिरपेक्षतावादी नीति मीमांसा
  - → न्याय ⇒ थ्रेसीमेकस ⇒ शक्तिशाली का हित ही न्याय है

∴ सोफिस्ट नीति मीमांसा आत्मनिष्ठतावाद पर बल देती है, सबसे प्रसिद्ध सोफिस्ट विचारक प्रोटागोरस का कथन Homo mensura अर्थात मनुष्य ही सभी वस्तुओ का मापदंड है इस आत्मनिष्ठता का आधार है, यहाँ मनुष्य का अर्थ व्यक्ति से है नीति मीमांसा में इस कथन का तात्पर्य यह हुआ कि प्रत्येक व्यक्ति अपने अनुसार तय करेगा कि क्या अशुभ है और क्या शुभ। इस दृष्टि से यह विचार सापेक्षतावाद को भी स्वीकार करता है यह विचार देने के पीछे एक मूल कारण यह था कि सोफिस्टो के पीछे यूनान विभिन्न नगर राज्यो में बंटा था और उनके नैतिक मानदंड और कानून परस्पर भिन्न और विरोधी थे, सोफिस्ट अपनी नीति मीमांसा मे ऐसी सम्भावना देखना चाहते थे कि विभिन्न नैतिक मानदंडो को समायोजित किया जा सके

Greek Phy.
(ग्रीक दर्शन) → (6th Cen B.C. से Start (थेल्स)
- +100 year → only Meta Physics
- (5th cen B.C से Ethics का विकास

(Greek Ethics)

- सुकरात पूर्व युग
  - सोफिस्ट परम्परा → विरोध (किसने किया) → सुकरात, प्लेटो, अरस्तू
- सुकरात का युग
  - सुकरात
  - प्लेटो
  - अरस्तू
  - सेरेनाइक परम्परा → अरिस्टीपस
  - सिनिक परम्परा → डायोजिनीस
  - धूर्तचार्वाक
- सुकरात पश्चात युग
  - एपिक्यूरसवाद → एपिक्यूरस
  - स्टोइक → जेनो

उपकार किया है तो हमे उसके प्रति कृतज्ञ होना चाहिए

अंतः प्रज्ञा के माध्यम से उपयोगितावाद की सिद्धी के लिए सिजविक ने निम्न तर्क दिए है →
(a) अंतः प्रज्ञा से ही हम जानते है कि सुख एक मात्र स्वतः साध्य शुभ है

(b) अंतः प्रज्ञा यह भी बताती है कि सभी व्यक्तियों के सुखो को समान महत्व दिया जाना चाहिए क्योंकि सभी मनुष्य मूलतः बराबर है, सिजविक के अनुसार केवल 1 स्थिति में किसी व्यक्ति को अन्य व्यक्तियो की तुलना मे अधिक सुख देना सही होगा, अगर ऐसा करने से सम्पूर्ण सुख की मात्रा या तीव्रता बढ़ती हो, यही तर्क आगे चलकर समतावादी दार्शनिक जॉन रॉल्स ने भी दिया है

(c) अंतः प्रज्ञा के आधार पर व्यक्तिगत सुखो और सामाजिक सुखो के द्वन्द्व भी सुलझ जाता है, व्यक्ति को अपने आप से, "विवेकपूर्ण आत्मप्रेम" जरूर करना चाहिए क्योंकि ऐसा करना अंतः प्रज्ञा से सुसंगत है इसके तहत उसे सिर्फ क्षणिक सुखो पर बल देने की बजाए बौद्धिक और स्थायी सुखो को स्थायी महत्व देना चाहिए। ऐसा विवेकपूर्ण आत्म प्रेम परार्थवाद के विरुद्ध भी नहीं है क्योंकि विवेकशील व्यक्ति अगर दूसरो को आहत किए बिना अपने हित की साधना करता है तो वह सामाजिक सुखो में वृद्धि ही करता है

(d) प्रचलित नैतिकता और अंतः प्रज्ञा मे भी गहरा संबंध है, प्रचलित नैतिकता के सिद्धान्त किसी न किसी समय अंतः प्रज्ञा के आधार पर ही बनाये गये थे इसलिए वे आमतौर पर सुसंगत होते है किन्तु अगर किसी बिन्दु पर प्रचलित नैतिकता और अंतः प्रज्ञा मे विरोध हो जाए तो अंतः प्रज्ञा को वरीयता दी जानी चाहिए क्योंकि हो सकता है कि पहले के नियम अब अप्रासंगिक रह गये हो, (अंतः प्रज्ञा सिर्फ व्यक्ति के स्तर पर नहीं देखी जानी चाहिए, सामूहिक स्तर पर देखी जानी चाहिए)

आलोचनाएं → अंतः प्रज्ञा का सिद्धान्त, खुद ही असिद्ध है
→ विभिन्न व्यक्तियों की अंतः प्रज्ञा हमेशा समान नहीं होती इसलिए नैतिकता आत्मनिष्ठ हो जाती है
→ किसी विवादास्पद मुद्दे पर समाज की सदस्यों की अंतः प्रज्ञा मे लगभग बराबर विरोध और समर्थन की स्थिति हो सकती है
→ अंतः प्रज्ञा वस्तुतः व्यक्ति का Superego ही होता है जो समाजीकरण से तय होता है, समाजीकरण विभिन्न समूहो मे अलग-2 तरीके से होता है अतः अंतः प्रज्ञा रूढ़िवाद को बढ़ावा दे सकती है
→ अल्पसंख्यको के दमन की सम्भावना बनती है, क्योंकि अगर नैतिकता अधिकतम व्यक्तियो के अनुसार तय होगी तो उन्हे समुचित महत्व नहीं मिलेगा

हेनरी सिजविक :-

→ मनोवैज्ञानिक सुखवाद को अस्वीकार कर दिया

→ नैतिक सुखवाद को स्वीकार किया (बेंथम, मिल ने भी)

इसे सिद्ध करने के लिए अंतः प्रज्ञा का सहारा लिया (intuition)

सिजविक का उपयोगितावाद :- हेनरी सिजविक का उपयोगितावाद नैतिक उपयोगितावाद तथा अंतः प्रज्ञात्मक उपयोगितावाद नामों से जाना जाता है इन्होंने बेंथम और मिल के उपयोगितावाद की कमियों को दूर करने का प्रयास किया है

ज्ञान
→ इंद्रियाँ (5 बाह्य + 1 आंतरिक (मन))
→ बुद्धि → पहले से ज्ञात से निकालती है (जैसा जान प्रा…)
→ अंतः प्रज्ञा

विशेषताएँ :- (1) सिजविक भी नैतिक सुखवाद के समर्थक हैं, बेंथम और मिल की तरह वह मानते हैं कि सुख एक मात्र स्वतः साध्य शुभ है बाकि सभी शुभ जैसे सत्य, सौन्दर्य और सद्गुण सुख के साधन के रूप में शुभ हैं

(2) सिजविक मनोवैज्ञानिक सुखवाद में विश्वास नहीं करते इस बिंदु पर वे बेंथम और मिल से अलग हैं इस संबंध में उनके निम्न तर्क हैं

:- वस्तुतः मनुष्य सुख की नहीं उन वस्तुओं की इच्छा करता है जो सुख देती हैं, भूखा आदमी रोटी चाहता है सुख नहीं, यह अलग बात है कि रोटी खाने के बाद उसे सुख मिलता है, सुख कारण नहीं परिणाम है, परिणाम को कारण की तरह समझने से ही यह तर्क दोष पैदा होता है।

:- मनुष्य सभी कार्य सिर्फ सुख की इच्छा से नहीं करता कई कार्य कर्तव्य या परोपकार भावना से प्रेरित होकर भी करता है

(3) सिजविक के सामने चुनौती यह थी कि वे नैतिक सुखवाद को कैसे सिद्ध करें बेंथम और मिल ने मनोवैज्ञानिक सुखवाद को इसका आधार बनाया था सिजविक ने इसके लिए अंतः प्रज्ञा को आधार बनाया, अंतः प्रज्ञा वह मानसिक शक्ति है जिससे व्यक्ति को किसी कर्म के औचित्य या अनौचित्य का साक्षात ज्ञान हो जाता है यह ज्ञान स्वतः सिद्ध होता है तथा इसे प्रमाणित करने के लिए किसी तर्क या युक्ति की आवश्यकता नहीं होती

सच बोलने की प्रबल सम्भावना है

② प्राकृतिक न्याय के सिद्धान्त की शर्त है कि दोनो पक्षो को सुनवाई का मौका मिले इसलिए mr. x की शिकायत के आधार पर मैं mr. A से लिखित सफाई मांगूगा

③ चूंकि ऐसे मामलो के सम्बन्ध मे विशाखा मामले मे S.C ने स्पष्ट दिशा-निर्देश दिए हुये है, इसलिए नैतिक प्रेरणा के लिए मैं अंतरआत्मा (Conscience) का नही बल्कि उन्ही दिशा निर्देशो का पालन करूँगा, अतः मैं कम से कम 3 सदस्यो की एक जाँच समीती गठित करूंगा जिसकी प्रमुख । महिला होगी और कम से कम ।अन्य महिला सदस्य होगी, । सदस्य किसी N.G.O से भी होना जरूरी है

④ जाँच समिती की रिपोर्ट आने तक इस बात का ध्यान रखूँगा कि mr A. उस पर अनुचित प्रभाव न डाल सके

(5) जाँच समिती की रिपोर्ट के आधार पर दोनो को मौका दूँगा कि वे चाहे तो इसके विरूद्ध अपील करे। नही तो रिपोर्ट मे अनुसंसित कारवाही करूँगा

समानता :- (बेंथम – मिल)

① परार्थवाद या उपयोगितावाद का समर्थन
② सुख जीवन का चरम लक्ष्य है, स्वतः साध्य शुभ है
③ अधिकतम व्यक्तियो के अधिकतम शुभ का सिद्धान्त
(4) दोनो मनोवैज्ञानिक सुखवाद को आधार बनाकर नैतिक सुखवाद की ओर बढ़े है
(5) दोनो ने अपने सुख से ज्यादा महत्व सामाजिक सुख को दिया है
(6) 4 बाह्य नैतिक आदेश या दबाव दोनो ने माने है
(7) दोनो मानते है कि अधिकतम व्यक्तियो के सुख की गणना करते समय प्रत्येक व्यक्ति का मूल्य = होना चाहिए

(तुलना)

(बेंथम) vs मिल)

सिर्फ मात्रात्मक वाद	मात्रात्मक और गुणात्मक वाद
निकृष्ट उपयोगितावाद	उत्कृष्ट उपयोगितावाद
बाह्य नैतिक आदेश	आंतरिक नैतिक आदेश (अंतरात्मा)
योग्य निर्णायकों को कोई विशेष भूमिका नहीं दी गयी	सुखों की उत्कृष्टता या निकृष्टता का फैसला योग्य निर्णायकों पर छोड़ा गया है
सुखों के मूल्यांकन के संदर्भ में मनुष्य को विशेष गरिमा नहीं दी गयी है	सुखों के मूल्यांकन की चर्चा में मनुष्य की गरिमा को विशेष तौर पर आधार बनाया गया है (असंतुष्ट मनुष्य, संतुष्ट सुअर से बेहतर)
व्यक्तिगत सुखों और सामुहिक सुखों का संबंध जोड़ने के लिए कोई युक्ति नहीं दी गयी	व्यक्तिगत सुखों से सामूहिक सुखों का सम्बन्ध जुड़ता है इसके लिए विशेष युक्ति दी गयी है इसमें जगह दोष है — प्रत्येक व्यक्ति का सुख उसके लिए शुभ है अतः सामान्य व्यक्तियों के समुदाय के लिए शुभ

~~स्वार्थी व्यक्ति अधिकतम व्यक्तियों के हित में क्यों काम करेगा~~

Date 6/11/2013

(UPSC Sample Paper से) Case Study

आप अपने दल - - - - - - - - - - आप क्या करेंगे? और क्यों?

Soln) महिला से लिखित ~~प्रार्थना~~ प्रार्थनापत्र लेंगे

अपने स्तर से एक टीम बनाकर Mr A के खिलाफ जाँच करवायेंगे।

Sinha format) इस जटिल स्थिति मे दुविधा जिन विकल्पों के कारण है वे हैं —

(a) अगर मैं Mr. X की शिकायत स्वीकार कर लेता हूँ तो Mr. ... को निलम्बित करने की नौबत आ सकती है और वह निलम्बित न भी हो तो कार्यालय का एक दक्ष कर्मचारी कम होने से ... लक्ष्यों का पूरा होना कठिन हो सकता है,

(b) अगर मैं लिखित शिकायत स्वीकार नहीं करता हूँ तो कार्यालय के लक्ष्य तो पूरे होते रहेंगे किन्तु श्रीमती X तथा अन्य महिला कर्मचारियों को महसूस होगा कि कार्यालय के अधिकारी उनकी सुरक्षा चिन्ताओं के प्रति संवेदनशील नहीं है, पुरुष कर्मचारियों को गलत प्रेरणा मिलेगी तथा दक्ष कर्मचारियों को लगेगा कि वे अपनी दक्षता के बदले अनुचित माँगे या अनुचित दबाव बना सकते हैं

इन विकल्पों मे से उचित निर्णय की मेरी प्रक्रिया इस प्रकार होगी

2)(1) मैं Mrs X की लिखित शिकायत को स्वीकार कर लूँगा क्योंकि उनकी बात को विश्वसनीय मानने के पक्ष मे मेरे पास कम से कम 2 आधार हैं (क) मैं जानता हूँ कि Mr. A महिलाओं के प्रति ... रखते हैं

हो सकता है कि किसी व्यक्ति में प्रबल स्वार्थ भावना के कारण यह आंतरिक भावना कमजोर पड़ गयी हो पर गिने चुने अपवादों को छोड़कर - यह सभी में होती है और सामाजिक व्यवस्था इसी के कारण चलती है।

(5) अधिकतम व्यक्तियों के अधिकतम सुख के गणना के लिए प्रत्येक व्यक्ति को = माना है (बेंथम ने भी माना है)

(मूल्यांकन) ① मिल का सिद्धान्त सामान्यतः काफी अच्छा, मनुष्य के मनोविज्ञान और समाज मनोविज्ञान के नज़दीक है।

② सुखों में गुणात्मक भेद मानते ही सुखवाद खारिज हो जाता है यह आलोचना मूर और रेशडेल ने विस्तार पूर्वक की है, इसका सार यह है कि अगर कोई सुख दूसरे सुख से ऊँचा है तो इसका मतलब ही है उस सुख में गुणात्मक रूप से दूसरे सुख की तुलना में कुछ और भी शामिल है वह तत्व जो कुछ भी है, अगर वह सुख को ऊँचा सिद्ध करने में निर्णायक है तो इस सिद्धान्त को सुखवाद कहना ही भ्रामक है (भ्रामक)

③ मिल ने जिस आंतरिक प्रेरणा या परोपकार की चर्चा की है उससे मनोवैज्ञानिक सुखवाद का खंडन होता है, अगर सच में परोपकार प्रवृत्ति काम करती है तो मनुष्य हर कार्य अपने सुख की चेष्टा से नहीं करता है अतः मनोवैज्ञानिक सुखवाद बाधित हो जाता है।

④ योग्य निर्णायकों का सिद्धान्त पूर्णतः आत्मनिष्ठ है इसके आधार किसी समाज में नैतिक मूल्य लिया नहीं किए जा सकते।

⑤ सुखों के समता मूलक वितरण का सिद्धान्त जो बेंथम और मिल दोनों ने दिया है, किसी भी ने स्पष्ट नहीं ~~किया है कि यह लागू कैसे होगा,~~

eg अगर कार्य क से बहुत से व्यक्तियों को निम्न तीव्रता या निम्न स्तर का सुख मिलता है जबकि कर्म ख से कुछ व्यक्तियों को ऊँचे स्तर का सुख मिलता है तो समाज को किसे नैतिक मानना चाहिए।। (98% व्यक्ति पटाखे फोड़ने का सुख) 2% व्यक्ति व पर्यावरण बचाने का सुख)

⑥ मिल के तर्क में संग्रह दोष है (fallacy of composition), जब वह कहते हैं कि प्रत्येक व्यक्ति को सुख इच्छित है अतः सामान्य सुख व्यक्तियों के समुच्चय के लिए [illegible] तो वह संग्रह दोष के शिकार हो जाते हैं क्योंकि न तो [illegible] ही व्यक्तियों का समुच्चय कोई समुच्चय है

गुणात्मक माना दोनो दृष्टियो से करते है ऐसे मे यह सोचना मूर्खता होगा कि सुखो का मूल्यांकन सिर्फ मात्रा से करना चाहिए.

(b) मनुष्यो मे पशुओ से ऊँची प्रवृत्तियाँ होती है जब उन्हें उन ऊँची प्रवृत्तियो का ज्ञान हो जाता है तो वह निकृष्ट सुखो की कामना करना बंद कर देते है, अधिक तीव्र शारीरिक सुख की तुलना मे कम तीव्र ~~मानसिक~~ बौद्धिक सुख अधिक उत्कृष्ट है उसका कथन है

"एक ~~असन्तुष्ट~~ संतुष्ट सुअर होने की अपेक्षा असंतुष्ट मनुष्य होना श्रेष्ठ है, ~~असंतुष्ट~~ मनुष्य की अपेक्षा असंतुष्ट सुकरात होना श्रेष्ठ है।" मूर्ख

(c) अगर सुखो मे गुणात्मक भेद है तो इस बात का निर्णय कैसे ~~होगा~~ होगा कि कौन सा सुख अन्य से श्रेष्ठ है, इसके उत्तर मे मिल का विचार है,, "जिस व्यक्ति ने अपने जीवन मे निकृष्ट उत्कृष्ट सुखो का अनुभव प्राप्त किया है केवल वही उनके निर्णायक हो सकते है," उसे विश्वास है कि ऐसे योग्य तथा अनुभवी निर्णायक बौद्धिक सुखो को शारीरिक सुखो से ^ महत्व देंगे।

(4) मिल के सामने भी यह प्रश्न है कि कोई व्यक्ति जो सामान्य तह अपने सुखो के बारे मे सोचता है वह अधिकतम व्यक्तियो के अधिकतम सुख के लिए आचरण क्यो करेगा, बेंथम ने इसके लिए 4 नैतिक दबावों की भी मिल उन चारो को स्वीकारता है किन्तु उसका दावा है कि इसके अलावा एक आंतरिक दबाव की भूमिका भी होती है

आंतरिक दबाव मनुष्य की मूल सामाजिक भावना से संबंधित है इसी के कारण प्रत्येक मनुष्य के भीतर यह इच्छा होती है कि वे समाज के सुख-दुख का ध्यान रखे और अपने कर्तव्यो का पालन करे यह प्रेरणा जन्मजात भले ही न हो but प्राकृतिक अवश्य है. इसी कारण हम इस के साथ वैसा ही व्यवहार करना चाहते है जो हम दूसरो से अपने प्रति

(1) केवल करते ... (2) ... मे मि... इस ... लिए ... (3) मि... बिन

(J.S. Mill) का उपयोगितावाद)

① J.S. mill का उपयोगिता बेंथम के उपयोगितावाद का अगला चरण है बेंथम के सिद्धान्त में जो तार्किक कमीयाँ रह गयी थी मिल ने उन्हें दूर करने की गम्भीर कोशिश की, वे अधिकांश बिंदुओ पर बेंथम से सहमत है, कुछ बिन्दुओ पर विरोध की मुद्रा मे है

② बेंथम की तरह मिल भी मनोवैज्ञानिक तथा नैतिक सुखवाद के समर्थक है बेंथम ने मनोवैज्ञानिक सुखवाद के पक्ष मे कोई प्रमाण नही दिया but मिल ने ऐसी कोशिश की है, उनका कथन है => कोई वस्तु वांछनीय है

इसे प्रमाणित करने का वास्तविक प्रमाण यही हो सकता है लोग वास्तव मे उसकी इच्छा करते है, प्रत्येक व्यक्ति जहाँ तक सुख को प्राप्य समझता है, वहाँ तक उसके लिए प्रयास करता है; यही मनोवैज्ञानिक सुखवाद का प्रमाण है

③ मनोवैज्ञानिक सुखवाद के आधार पर मिल ने बेंथम की तरह नैतिक सुखवाद को भी स्वीकार किया है उनकी स्पष्ट राय है कि सुख एकमात्र स्वतः शुभ है बाकि जो कुछ भी शुभ है, वह सुख के साधन के रूप मे है, वस्तु उतनी है शुभ है जिस अनुपात मे वह सुख उत्पन्न करती है।

- मिल ने अधिकतम व्यक्तियो के अधिकतम ~~व्यक्तियो के~~ सुख को प्रमाणित करने के लिए एक तर्क दिया है जो इस प्रकार है —

"प्रत्येक व्यक्ति का सुख उसके लिए शुभ है अतः सामान्य सुख व्यक्तियो के समुच्चय के लिए शुभ है।

③ मिल ने सुखो मे गुणात्मक भेद को माना है और इस बिन्दु पर वह बेंथम और अरिस्टीपस से अलग है, इस संबंध मे उनके प्रमुख विचार निम्न है → (a) सुखो मे सिर्फ मात्रात्मक अंतर करना पर्याप्त नही है उनमें गुणो के आधार पर भी अंतर करना

(c) राजनैतिक दबाव → दंड का भय, पुरस्कार का लालच

(d) धार्मिक दबाव → ईश्वर बुरे कार्यों का दंड देगा, या अच्छे कार्यों के बदले स्वर्ग देगा।

(6) बैंथम ने अपने उपयोगितावाद में न्याय के सिद्धान्त का भी ध्यान रखा उसका प्रसिद्ध कथन है- प्रत्येक व्यक्ति का महत्व। व्यक्ति का महत्व है केवल इसलिए अधिक नहीं।

इसका अर्थ है जब हम किसी कार्य की उपयोगिता का हिसाब (4) करने के लिए अधिकतम व्यक्तियों के अधिकतम सुखों की गणना करेंगे तो विभिन्न व्यक्तियों की आर्थिक सामाजिक परिस्थितियों को महत्व नहीं देंगे अमीर व्यक्ति का हित उतना ही गिना जायेगा जितना गरीब का, इस विचार का लाभ यह है कि यह विभिन्न व्यक्तियों में सुख के न्यायपूर्ण वितरण को सुनिश्चित करता है

(मूल्यांकन) → (1) Hedonistic Calculus का सिद्धान्त अव्यवहारिक है, सुख एक अनुभूति है जिसे सटीकरूप से मापा नहीं जा सकता बैंथम ने यह नहीं बताया कि यदि Hedonistic calculus के विभिन्न प्रतिमानों में अन्तर्विरोध हो जाए तो गणना कैसे की जायेगी-

eg:- अगर मिठाई खाने व उपन्यास पढ़ने के सुख की तुलना करते हो तो मिठाई के सुख में तीव्रता↑ अवधि कम है जबकि उपन्यास के (5) सुख में अवधि ↑ है तीव्रता ↓ है,

(2) बैंथम ने जिन 4 नैतिक दबावों की चर्चा की है उनसे प्रतीत होता कि नैतिकता सिर्फ बाहरी दबावों में टिकी है, जबकि सत्य यह है कि ऊँचे स्तर की नैतिकता हमेशा आंतरिक ~~स्वयं~~ प्रेरणा पर आधारित

(3) सुखों में गुणात्मक भेदों को न मानकर बैंथम ने मनुष्य की ऊँची प्रवृति का अपमान किया है

(4) अधिकतम व्यक्तियों के अधिकतम सुखों का प्रतिमान अल्पसंख्यकों के हितों की रक्षा नहीं कर पाता और बहुसंख्यकों की तानाशाही को प्रस्तावित (गांधी ने इसी आधार पर उपयोगितावाद का विरोध किया

(e) उत्पादकता (fecundity) → अन्य सुखों को उत्पन्न करने वाला सुख > अनोत्पादक सुख

(f) शुद्धता → अमिश्रित सुख > कष्टमिश्रित सुख

(g) व्यापकता → बहुत से व्यक्तियों का सुख > 1 व्यक्ति का सुख

(4) बेंथम ने साधारणतया हॉब्स के स्वार्थवाद का समर्थन किया है हॉब्स की तरह उनकी भी राय है मनुष्य मूलतः स्वार्थी है और तब तक कोई कार्य नहीं करता जब तक उसमें उसे कोई लाभ नहीं है

उनका प्रसिद्ध वाक्य, "ऐसी कल्पना भी मत करो कोई व्यक्ति अपनी सबसे छोटी अंगुली भी आपके पक्ष में हिलायेगा, जब तक उसे साफ नजर न आ जाए कि इसमें उसका अपना फायदा है,"

किंतु स्वार्थवाद को महत्व देने के बाद भी बेंथम की गणना उपयोगितावाद (जो कि मूलतः परार्थवादी सिद्धान्त है) में इसलिए होती है क्योंकि सुख कलन के 7वें प्रतिमान में उसमें बहुत से व्यक्तियों के सुख को एक व्यक्ति के सुख की तुलना में शुभ माना है.

(5) ~~हॉब्स~~ बेंथम के सिद्धान्त के सामने सबसे बड़ी चुनौती यह है ~~कि~~ अगर हर व्यक्ति अपनी मूल ~~प्रकृति~~ प्रकृति में स्वार्थी है तो वह अधिकतम व्यक्तियों के अधिकतम सुख के अनुसार आचरण करेगा ही क्यों?

बेंथम ने इसके उत्तर में 4 नैतिक आदेशों की चर्चा की है

उनका दावा है कि व्यक्ति इन चार ~~दबाव~~ ~~[illegible]~~ दबावों के तहत परार्थ की चेतना से कार्य करने को बाध्य होता है

(a) प्राकृतिक दबाव → शारीरिक स्वास्थ्य के लिए जिन नियमों का पालन करना पड़ता है
eg → कोई भी व्यक्ति पूरे शहर के बारे में ज़हर नहीं मिलाता क्योंकि यह स्वयं उसके स्वास्थ्य के लिए घातक है।

(b) सामाजिक दबाव → समाज द्वारा प्रशंसा, आलोचना और निंदा का भय

(Act- उपयोगितावाद)

- सीमित → उपयोगिता का निर्धारण किसी विशेष समुदाय के हित के आधार पर होता है।
  e.g. भारत का हित, U.S.A का हित, etc
- सार्वभौमिक → सम्पूर्ण मानव समुदाय के आधार पर उपयोगिता का निर्धारण

Rule of (उपयो...

- सीमित → विशेष समुदाय के आधार पर
- सार्वभौ... → सम्पूर्ण मानव स... के आधार...

(बेंथम का उपयोगितावाद)

① बेंथम मनोवैज्ञानिक सुखवाद तथा नैतिक सुखवाद के समर्थक हैं और इन्ही के आधार पर अपने उपयोगिता का ढाँचा खड़ा करते हैं, वे मानते हैं कि कोई कर्म या नियम अधिकतम व्यक्तियों के लिए अधिकतम उपयोगिता रखता है या नहीं इसका एकमात्र पैमाना सुख है, शेष सभी वांछनीय वस्तुएँ सुख के साधन के रूप मे ही शुभ सुख हो सकती हैं (ज्ञान चरित्र, etc) उन्होंने यह भी स्पष्ट किया है— जो कर्म या नियम जितना अधिक सुख उत्पन्न करते हैं उसी अनुपात मे वे समाज के लिए उपयोगी या शुभ होते हैं,

② बेंथम ने सुखो मे गुणात्मक अंतर स्वीकार नही किया है उनका मत है कि विभिन्न सुखो मे सिर्फ मात्रात्मक भेद होता है, उनका प्रसिद्ध कथन है, " Pushpin (खेल एक प्रकार) उतना ही शुभ है जितनी शुभ कविता है'।

③ प्रश्न उठता है यदि सुखो मे सिर्फ मात्रात्मक भेद है तो ~~इनकी आपसी~~ तुलना के लिए इस मात्रा को मापा कैसे जायेगा?, बेंथम से पहले के सुखवादियो ने इस दिशा मे विशेष प्रयास नही किया था but बेंथम ने इसके लिए सुखकलन (Hedonistic calculus) का सिद्धान्त दिया है, जिसके तहत सात प्रतिमानो के आधार पर सुखो की तुलना की जा सकती है ⇒

- (a) तीव्रता intensity → अधिक तीव्र सुख > कम तीव्र सुख
- (b) अवधि ⟶ दीर्घकालीक सुख > क्षणिक सुख
- (c) निश्चितता ⟶ निश्चित सुख > अनिश्चित सुख
- (d) निकटता ⟶ तत्कालि सुख > भावी सुख

आधारित है। अधिकांश उपयोगितावादियों ने परिणामनिरपेक्षवाद या कर्तव्यवाद का विरोध किया है

(उपयोगितावाद का वर्गीकरण)

- (सुख)मूलक उपयोगितावाद
  - समर्थक ... है कि उपयोगिता का आधार सुख है (मिल सिजविक)
- आदर्शात्मक (मूलक) उपयोगितावाद
  - इनकी उपयोगिता की धारणा कुछ व्यापक है। इसमें सुख तो शामिल है ही किन्तु सुख के अलावा अन्य आधार भी हो सकते हैं eg ज्ञान, प्रेम, सद्गुण और चारित्रिक श्रेष्ठता को सुख की तरह स्वयं शुभ माना जा सकता है (हैस्टिंग रेशडेल) (G.E. मूर)
- (Act) कर्म संबंधी उपयोगिता
  - इसके अंतर्गत कर्म विशेष के संबंध में तय किया जाता है कि वह समाज के लिए उपयोगी है या नहीं
- (Rule) नियम संबंधी उपयोगितावाद
  - इसमें विशेष कर्मों पर नहीं बल्कि नियमों की उपयोगिता पर बल दिया जाता है यदि नियम अधिकतम व्यक्तियों के अधिकतम सुख में सहायक है तो इसके अनुसार प्रत्येक स्थिति में इसका उपयोग किया जाना चाहिए। एक अर्थ में यह Teleology के गुण के अंदर Deontology को शामिल करने की कोशिश है
- Gross निकृष्ट उपयोगितावाद (बेंथम)
  - सुखों में गुणात्मक भेद नहीं
- Define उत्कृष्ट उपयोगितावाद (मिल)
  - सुखों में गुणात्मक भेद

(iii) व्यक्ति को सुखो की तलाश बुद्धि की प्रेरणा से नहीं इंद्रियों की प्रेरणा के अनुसार नहीं

(iv) कोशिश करनी चाहिए कि व्यक्ति सुख और दुःख से उदासीन हो जाए यह विचार कुछ-कुछ गीता में स्थितप्रज्ञ जैसा है

(उपयोगितावाद) =>

(क्या है) → सुखवाद का एक प्रकार है पर अनिवार्य नहीं,

(उपयोगिता का अर्थ)
व्यक्तिगत नहीं सामाजिक
→ Universal संदर्भ मे

उपयोगिता नीतिशास्त्र का एक आधुनिक सिद्धान्त जो मुख्यतः 18वी तथा 19वी सदी मे विकसित हुआ 18वी सदी मे शाफ्ट्सबरी और बटलर, तथा 19वी बेंथम, मिल, सिजविक इसके प्रमुख समर्थक माने जाते

∴ उपयोगितावाद के सभी समर्थक मानते है कि वही कर्म शुभ जो व्यक्ति विशेष के हित मे न होकर, व्यापक सामाजिक हित सिद्धि की पुष्टि करता है, सबसे शुभ वह कार्य है जो सम्पूर्ण समाज के हित मे हो, यदि यह सम्भव नहीं है तो वह कार्य शुभ है जो अधिकतम व्यक्तियों के अधिकतम सुख को साधने मे सहा

→ उपयोगितावाद मे शुभ की मूल परिभाषा किसी वस्तु या कार्य की उपयोगिता से तय होती है, जो समाज के लिए उपयोगी है वह शुभ है आम तौर पर उपयोगी वही है जो समाज को सुख प्रदान करता है, इसलिए अधिकांश उपयोगितावादी सुखवादी भी है किन्तु अगर कोई यह माने कि सुख के अलावा कोई अन्य वस्तु है जो समाज के लिए उपयोगी है तो उपयोगितावाद सुखवाद से पृथक भी हो सकता है e.g. हेस्टिंग्स रैशडेल का उपयोगितावाद इसी प्रकार का है

∴ उपयोगितावाद एक परिणामसापेक्षवादी (Teleological) विचारधारा और इसके सभी समर्थक मानते है कि किसी कार्य के शुभ या

निकृष्ट स्वार्थमूलक सुखवाद ⇒ ① समर्थक → अरिस्टीपस, हॉब्स, चार्वाक (धूर्त)

② विचार → + एकमात्र लक्ष्य = अधिकतम व्यक्तिगत सुख → इसी से शुभ/अशुभ का निर्धारण

+ सुखो मे सिर्फ मात्राभेद, गुणभेद नही, जो सुख अधिक तीव्र है या अधिक समय तक मिलने वाला है वह अधिक शुभ है

+ आमतौर पर शारिरिक सुख मानसिक सुख से ↑ क्योंकि उसमे तीव्रता ↑ होती है, (इसलिए कुछ लोग इस सिद्धान्त को इंद्रीयतृप्तीवाद भी कहते हैं)

⇒ वर्तमान सुख भविष्य के सुख से बेहतर

⇒ निश्चित सुख, सम्भावित सुख से बेहतर (हाथ की 1 चिड़िया, झाड़ी की 2 चिड़िया से बेहतर)

मूल्यांकन ⇒ यह सिद्धान्त सामाजिक व्यवस्था को ध्वस्त कर सकता है, सुखो मे गुणभेद नही मानता, मनुष्य की उच्च मानसिक क्षमताओं का अपमान है

उत्कृष्ट स्वार्थमूलक सुखवाद ⇒ ① इस सिद्धान्त के ज्यादा उदाहरण नही मिलते है, आमतौर पर ऐपिक्यूरस अकेला बड़ा विचारक है जो इसके पक्ष मे है उसके विचारो को ऐपिक्यूरिज्म कहा जाता है

② आजकल England मे ऐपिक्यूरिकवाद का लोकप्रिय अर्थ मौज-मस्ती से है but सच यह है कि ऐपिक्यूरस निकृष्ट सुखवाद न होकर उत्कृष्ट सुखवादी था।

③ इस सिद्धान्त की अनिवार्य विशेषतायें केवल 2 है

(a) स्वार्थ पर बल अर्थात व्यक्ति को सिर्फ अपने हितो के संबंध मे सक्रिय होना चाहिए

(b) सुखो मे गुणात्मक भेद की स्वीकृति

④ ऐपिक्यूरस के विचारो के आधार पर इस सिद्धान्त के कुछ और लक्षण देखे जा सकते है (ये ऐपिक्यूरस के वचन है)

(I) सुख का अर्थ → शारीरिक व मानसिक दुखो का अभाव

(II) मानसिक सुख → शारीरिक सुख से बेहतर → एक तो उनमे स्थायित्व ↑ होता है दूसरे वे अमिश्रित सुख होते है जबकि शारीरिक सुखो मे दुख भी होता है

नैतिक सुखवाद →)
(1) यह एक चाहिए मूलक सिद्धान्त है → प्रत्येक व्यक्ति को अपने कर्तव्य का निर्धारण इस आधार पर करना चाहिए कि कौन सा विकल्प चुनने पर उसे अधिकतम सुख की प्राप्ति होगी, शुभ और अशुभ के निर्धारण का आधार सुख ही है, सुखात्मक विकल्प शुभ है और सुखबाधक विकल्प अशुभ

(2) सुख सर्वोच्च शुभ है अर्थात वह किसी साध्य के लिए साधन न होकर अपने आप में ही साध्य है,
सापेक्ष शुभ वे हैं जो सुख की प्राप्ति में सहायक है
eg पारस्परिक स्नेह या साहस जैसे सद्गुण इसलिए शुभ हैं कि वे अन्ततः सुख की उपलब्धि में सहायक हैं

(3) नैतिक सुखवाद की चार शाखाएं हैं (इन पर आगे लिखा है)

मूल्यांकन) (1) आमतौर पर यह सिद्धान्त व्यवहारिक जीवन में लागू होता है विश्व के प्रत्येक धर्म में सर्वे भवन्तु सुखिनः जैसी प्रार्थनाएं इसलिए क्योंकि सुख को शुभ माना गया है

(2) समस्या यह है कि इसमें चरित्र ज्ञान और परोपकार जैसे उदात्त (गरिमा से युक्त हुआ)
— सिर्फ साधन बन जाते हैं उनका अपना कोई महत्व नहीं रहता।।

(3) कई सुख ऐसे हैं जो सुख देकर भी वांछनीय नहीं माने जा सकते
— eg इसको को रूप में देखकर सुख महसूस करना।

(4) यह सिद्धान्त इस विचार पर टिका है कि जो कर्म जितना अधिक सुख दे वह उतना ही नैतिक है जबकि सच यह है कि सुख एक आंतरिक अनुभूति है जिसे ठीक तरह से मापना असम्भव है अतः तुलना करना भी सम्भव नहीं

मनोवैज्ञानिक सुखवाद

① प्रत्येक मानव के सभी कर्म सुख प्राप्ति की स्वाभाविक इच्छा से प्रेरित होते है

② अरस्तीपस, हॉब्स, बेंथम मिल आदि इसी का समर्थन करते है

③ नैतिक सुखवाद इसी पर आधारित है

(मूल्यांकन) ① सामान्यतः सही है
② यह नैतिक सुखवाद का आधार नहीं बन सकता 2 कारणो से

ⓐ है से चाहिए का निष्कर्ष निकालना अनुचित
ⓑ अगर मनोवैज्ञानिक सुखवाद पूर्णतः सत्य है तो नैतिक सुखवाद का सिद्धान्त अनावश्यक और निरर्थक है

③ इस Qus का Ans नहीं मिल पाता कि कई लोग जानबूझकर दुखात्मक विकल्पो को क्यों चुनते है eg, आत्महत्या की कोशिश etc

(सुखवाद का विरोधाभास) :- प्रसिद्ध उपयोगितावादी विचारक सिजविक ने मनोवैज्ञानिक सुखवाद की आलोचना करने के लिए सुखवाद का विरोधाभास दिया है। उसका तर्क है कि अगर कोई व्यक्ति हर क्षण सुख प्राप्ति के बारे मे सोचता रहेगा (जैसाकि मनोवैज्ञानिक सुखवादी कहते है) तो वह कभी सुख प्राप्त कर ही नहीं पायेगा, क्योंकि सुख प्राप्ति के लिए जरूरी है कि कर्म करते समय व्यक्ति सुख को भूल जाए (eg यदि कोई व्यक्ति फुटबाल खेलते समय खेल मे ध्यान न दे और खेल से मिलने वाले सुख के बारे मे सोचता रहे तो उसे खेल मे सुख मिलेगा ही नहीं)

सिजविक का दावा है कि यह विरोधाभास मनो० सुखवाद को खारिज कर देता है क्योंकि इससे सिद्ध होता है कि कर्म करते समय सुख हमारा तात्कालिक और प्रत्यक्ष प्रयोजन नहीं हो सकता,

मनोवैज्ञानिक सुखवादियो का दावा है कि सुखवाद के विरोधाभास से उनका सिद्धान्त खारिज नहीं होता इस विरोधाभास से सिर्फ इतना सिद्ध होता है कि सुख के विषय मे हर क्षण सोचते रहने से सुख प्राप्त नहीं होता, इससे यह सिद्ध नहीं होता कि हमारे सभी कर्म अन्ततः सुख के प्रयोजन को लेकर नहीं चलते है

(समन्वय से बने चार सिद्धान्त)

[illegible] वाद

(1) G निकृष्ट, E स्वार्थमूलक, H सुखवाद
- अरिस्टीपस, हॉब्स
- सारे सुख बराबर हैं सिर्फ अपने सुख पर ध्यान दो,

(2) R उत्कृष्ट, E स्वार्थमूलक, H सुखवाद
- सिर्फ अपने सुख पर ध्यान दो किन्तु ध्यान रखो कि सुखों में गुणात्मक भेद होता है So ऊँचे सुखों पर ध्यान दो नीचे " " नहीं
- ॥ एपिक्यूरस

(3) G निकृष्ट, A परार्थमूलक, H सुखवाद
- सिर्फ अपने नहीं सभी के सुखों का ध्यान देना चाहिए सारे सुख बराबर हैं उनमें सिर्फ मात्रा भेद है गुण भेद नहीं (अगर समाज के अधिकांश व्यक्तियों को क्रिकेट देखना अच्छा लगता है तो वही सुख है)
- ↓ बेंथम

(4) R उत्कृष्ट, A परार्थमूलक, H सुखवाद
- सिर्फ अपने नहीं, सम्पूर्ण समाज के सुखों पर बल दो और यह भी ध्यान रखो कि सुखों में गुणात्मक भेद होता है, उच्चकोटि के सुखों को वरीयता दी जानी चाहिए (क्रिकेट देखने से अच्छा है कुमार गंधर्व को सुनना)
- ↓ J.S. Mill

सुखवाद के प्रकार

- ...ानिक ...द
  - ...व्यक्ति स्वभावतः ... प्राप्ति का प्रयास ...ता है
- नैतिक सुखवाद
  - ...व्यक्ति को नैतिक ...से अपने सुखों की ...लब्धि का प्रयास ...ना चाहिए
- ① Egoistic Hedonism (स्वार्थमूलक सुखवाद)
  - व्यक्ति को सिर्फ अपने सुखों की उपलब्धि का प्रयास करना चाहिए दूसरे के सुखों की चिन्ता करना उसका कार्य नहीं है
- ② (परार्थमूलक) Altruistic Hedonism / Universalistic Hedonism सर्वार्थमूलक स्वार्थवाद (व्यापक सुखवाद)
  - व्यक्ति को सिर्फ अपने ही नहीं सभी के सुखों पर ध्यान देना चाहिए सभी के सुखों में उसका अपना सुख स्वभावतः निहित है
- ③ Gross Hedonism निकृष्ट सुखवाद
  - सिर्फ सुखों को सिर्फ मात्रात्मक भेद होता है गुणात्मक है और
  - eg - चटपटा भोजन करने के सुख में गुणात्मक दर्शन पढ़ने के भेद नहीं है
- ④ Refine Hedonism उत्कृष्ट सुखवाद
  - सुखों में सिर्फ मात्रात्मक ही नहीं गुणात्मक भेद भी होता है, परोपकार का सुख स्वार्थ के सुख से बेहतर है
  - eg - गणित पढ़ने का सुख, चार खाने के सुख से बेहतर।

(1/3) (1/4) (2/3) (2/4)

सुख की परिभाषा :)

- +ive भावात्मक
  - सिजविक की परिभाषा
    - सुख वह अनुभूति है जिसे विवेकशील प्राणी अनुभव करते हैं और अन्य अनुभूतियों की तुलना में वांछनीय समझते हैं पर प्राथमिकता देते हैं
- -ive अभावात्मक
  - एपिक्यूरस की परिभाषा
    - शारीरिक पीड़ा और मानसिक कष्ट का अभाव सुख है, सुख का चरम स्तर दुख के पूर्ण विनाश में है

सुखवादी विचारक

- पश्चिम
  - अरिस्टीपस
  - एपिक्यूरस
  - ह्यूम
  - मिल
- भारत
  - चार्वाक, वेदों में भी सुखवाद की झलक, सर्वे भवन्तु सुखिनः जैसे कथन सुखवाद पर है

(आलोचना)

+ ive	− ive
सामान्यतः सही सिद्धान्त क्योंकि मनुष्य आमतौर स्वार्थी होता ही है	1 सामाजिक समझौते के पक्ष मे कोई प्रमाण नहीं है कई विचारक मानते है कि समाज और राज्य प्राकृतिक जैसा है (के विद्वान) 1 परोपकार और आत्मबलिदान जैसे कर्मों की व्याख्या हॉब्स के स्वार्थवाद से नहीं हो पाती

(सुखवाद) (Hedonism)

- (Greek शब्द) ← Hedon से बना है → सुख
- सुख और आनंद मे कुछ अंतर करते है और कुछ अंतर नहीं करते (मिल)
  भारत मे सांख्य को छोड़कर सभी अंतर मानते है
  1. सुख का संबंध शारीरिक इन्द्रिय है और आनंद → बुद्धि, भावना, मन से
  2. सुख → प्रायः क्षणिक, अस्थायी; आनंद → अधिक स्थायित्व
  3. सुख → अधिक तीव्रता; आनंद → प्रायः तीव्रताकम
- (मनो॰ सुखवाद) → प्रत्येक व्यक्ति सुख की कामना करता है
- (नैतिक सुखवाद) → प्रत्येक व्यक्ति को सुख की कामना करनी चाहिए

सुख → eg → स्वादिष्ट भोजन, यौन सुख, उत्तेजक पेयपदार्थ

आनंद → साहित्य, आध्यात्मिक अनुभव,

: मनुष्य की अनन्त इच्छायें है but 2 सबसे imp

: अपने जीवन की रक्षा की इच्छा

: अधिकतम सुख प्राप्त करने की इच्छा

शेष सभी इच्छाये इन्ही 2 से आती है

(2) नैतिक स्वार्थवाद का समर्थन :- शुभ और अशुभ का संबंध मनुष्य के इच्छाओं से है जिस वस्तु या कर्म से किसी मनुष्य की इच्छा पूर्ण होती है वह शुभ है और जिससे इच्छा पूर्ति मे बाधा हो वह अशुभ है

: स्पष्ट है कि शुभ और अशुभ वस्तुनिष्ठ और निरपेक्ष नही है जो किसी एक व्यक्ति के लिए शुभ है वही दूसरे के लिए अशुभ हो सकता है, एक ही व्यक्ति अलग-2 समय मे एक ही वस्तु को शुभ और अशुभ मान सकता है ऐसा कहकर हॉब्स ने नीति मीमांसा मे आत्मनिष्ठतावाद तथा सापेक्षवाद को स्वीकार कर लिया है

(3) प्रश्न यह है कि प्रत्येक व्यक्ति इतना स्वार्थी है तो वह समाज के नियमों तथा राज्यों के कानूनों को क्यो स्वीकार करता है जबकि इनमें से कई व्यक्ति के निरपेक्ष इच्छाओं के विरुद्ध होते है।

इसके लिए हॉब्स ने सामाजिक समझौते का सिद्धान्त दिया, जिसका सार कि सामाजिक ~~लौकिक~~ राजनैतिक व्यवस्था का निर्माण भी मनुष्य की अपनी स्वार्थपूर्ति के लिए किया है

हॉब्स के अनुसार समाज के निर्माण से पहले प्राकृतिक स्थिति थी जिसमें हर व्यक्ति हर व्यक्ति का शत्रु था उस समय आपसी संघर्ष इतना था कोई भी व्यक्ति कभी सुरक्षित नही, इस स्थिति से बाहर निकलने के लिए सभी व्यक्तियों ने समझौता किया और अपनी-2 शक्तियाँ राज्य को सौंप तथा तय किया कि वे आपसी संघर्षों को त्याग कर राज्य के आदेशों का

[illegible]hical Egoism

मूल्यांकन ⇒ ① पूर्णतः व्यक्तिवादी सिद्धान्त समाज की उपेक्षा।

② कई स्थितियों मे अनैतिक होने का खतरा → अगर मेरा स्वार्थ इसमें है कि मेरे पड़ोसी का घर गिर जाए ताकि मेरे घर मे धूप आ सके तो मुझे क्या करना चाहिए?

[illegible]धिकांश समर्थक सुखवादी है but यह जरूरी नही

असली Qus यह है कि क्या मनोवैज्ञानिक स्वार्थवाद सचमुच नैतिक स्वार्थवाद की स्थापना कर पाता है या नही, इसमे 2 समस्याएं है

① मनो० तथ्य से नैतिक निष्कर्ष निकालना तर्कशास्त्र का उल्लंघन है क्यूँ" मूलक वाक्य से, चाहिए मूलक निष्कर्ष नही निकल सकता, आधार कथन तथा निष्कर्ष कथन मे समानता होनी चाहिए।

② अगर मनोवैज्ञानिक स्वार्थवाद पूर्णतः सत्य है अर्थात यह तथ्य है कि कोई भी मनुष्य स्वार्थी होने को बाध्य है तो नैतिक स्वार्थवाद एक अनावश्यक सिद्धान्त है

e.g. हम जानते है कि लोभ लेना मनुष्य के लिए अनिवार्य है ऐसे मे यह कहना कि मनुष्य को लोभ लेना चाहिए एक अनावश्यक कथन है क्योंकि ज़बरदस्ती कोई चारा भी नहीं है या मनुष्य को जिनके लिए ... नैतिक (ऐच्छिक कर्मों से होता) गौरतलब है कि नीतिशास्त्र का संबंध हमारे ऐच्छिक कर्मों से जिनके लिए हम उत्तरदायी है न कि उन कर्मों से

[illegible]मनुष्य अपने समाज की रक्षा [illegible]जीवन का बलिदान कर देते है कम [illegible]व्यक्तियों की व्याख्या मनोवैज्ञानिक [illegible]वाद कर सकता है, जब वे जीवित [illegible] रहे। तब उनके कौनसे स्वार्थ [illegible] होंगे।

[illegible]प्रकार के सुख को खारिज करता है [illegible]रा बच्चे के लिए किया गया [illegible]के निरपेक्ष रूप मे स्वार्थ माना [illegible]जाता है)

थॉमस हाब्स का स्वार्थवाद ⇒ ① मनोवैज्ञानिक स्वार्थवाद का पूरा समर्थन ⇒ व्यक्ति का सम्पूर्ण जीवन उसकी स्वार्थ मूलक इच्छाओं की पूर्ति के प्रयास में गुजरता है वह भौतिक वस्तुओं को ही नहीं बल्कि स्नेह प्रेम, त्याग जैसे गुणों को भी इसलिए महत्व देता है क्योंकि वे उसकी इच्छा पूर्ति मे सहायक होते है

∴ स्वार्थी होना बुरा नहीं है यह मनुष्य की प्रकृति है जिस तरह कोई पत्थर आकाश मे उड़ नहीं सकता वैसे ही कोई मनुष्य परोपकारी

(पश्चिमी दर्शन)

- Greek
- Medieval → एक्वाइनस
- Modern (1749)
- Contemporary → (Meta Ethics)

स्वार्थवाद (Egoism) → मनुष्य स्वार्थी होता है, और मनु[ष्य] को स्वार्थी होना भी चाहिए

Psychological Egoism

मनोवैज्ञानिक स्वार्थवाद → प्रत्येक मनुष्य स्वार्थी होता है अर्थात वह अपने ~~हित~~ या सिर्फ कल्याण के लिए सभी कार्य करता है

1) नैतिक स्वार्थवाद को सिद्ध करने के लिए इस सिद्धान्त का प्रयोग होता है हॉब्स और शिलक जैसे विचारकों ने इसी को आधार बनाया है

2) इस सिद्धान्त का आशय यह है कि व्यक्ति अनिवार्यतः स्वार्थी होता है। यह उम्मीद करना कि वह अपने स्वार्थ की बलि चढ़ाकर समाज के

Ethical Egoism (नैतिक स्वार्थवाद)

मनुष्य को स्वार्थी होना चाहिए अर्थात प्रत्येक व्यक्ति को सिर्फ अपने हित सुख या कल्याण के लिए सभी कर्म करने चाहिए

(imp)
1) आमतौर पर जो व्यक्ति नैति[क] स्वार्थवादी होगा वह सुखवा[दी] भी होगा, e.g. अरिस्टीपस, ~~हॉब्स~~ शिलक, इन दोनों के समर्थक रहे किन्तु यह अनिवार्य नहीं है कि स्वार्थवादी सुखवादी हो ही, यह [इस] बात से तय होगा कि वह अ[पने] स्वार्थ की व्याख्या किस प्रकार करता है e.g. अगर कोई मान ले [कि] उसका स्वार्थ सुखों को हासिल क[रने] में नहीं है बल्कि ज्ञान व सद्गु[ण] अर्जित करने में है और उन्हें [अर्जित] करने की प्रक्रिया में कष्ट उठाने [पड़ें] तो वह स्वार्थवादी होकर भी सु[खवादी] नहीं होगा

2) यह भी जरूरी नहीं है कि स्वार्थवा[दी] नैतिक सिद्धान्त मानने वाला व्यक्ति आत्म केन्द्रि[त] और समाज से कटा हुआ हो, यह भी इस बात [पर निर्भर] होगा कि वह अपने स्वार्थ की व्याख्या किस प्रकार क[रता है] e.g. अगर कोई मान ले कि उसका स्वार्थ अच्छी सामा[जिक] व्यवस्था बनाने में ही निहित है तो वह स्वार्थवादी हो

Date 5/11/2013

सत्य → सत्याग्रह

:- सत्य शब्द का प्रयोग 2 अर्थों में किया है सीमित तथा व्यापक
:- व्यापक अर्थ में सत्य और ईश्वर समानार्थक है, ईश्वर में निष्ठा रखते हुये नैतिक जीवन जीना) सत्य पूर्ण जीवन इसी दृष्टिकोण से गाँधी जी ने अपनी आत्मकथा को सत्य के साथ मेरे प्रयोग कहा है

:- सीमित रूप में सत्य का अर्थ है मन, वचन कर्म से झूठ बोलने या छल करने से दूर रहना, जो तथ्य जिस रूप में देखा - समझा या जाना गया है, उसे उसी रूप में बिना कोई संशोधन किए व्यक्त करना सत्य है -

:- सत्य के मार्ग मे चलना कठिन but जरूरी है, कठिन इसलिए है कि यह अत्यन्त साहस की माँग करता है और जरूरी इसलिए है कि नैतिक सामाजिक संबंध इसी के आधार पर स्थापित किए जा सकते है

:- सत्य के मार्ग पर चलने के उपाय (गाँधी जी द्वारा)

1. अनावश्यक अभिव्यक्तियों से बचना चाहिए
2. तथ्यो से छेड़छाड़ या अतिशयोक्ति जैसे प्रयासों से दूर रहना चाहिए
3. कष्ट, निंदा और दूसरो का क्रोध झेलने की क्षमता विकसित करनी चाहिए क्योंकि सत्य बोलने पर यह सब परिणाम स्वाभाविक रूप से होते है
4. अनावश्यक दार्शनिक उलझनों मे फँसने के बजाए अपनी आत्मबुद्धि से सत्य का आचरण करना चाहिए

गाय को बचाने के लिए झूठ बोलना चाहिए या नहीं ऐसी समस्याओं का उठाकर सत्य की उपेक्षा करना अनुचित है

आज मनुष्य अपने व्यवहारिक जीवन मे सत्य का दृढ़तापूर्वक

कायरता विवशता/दुर्बलता से पैदा होती है

2) अहिंसा के अपवाद => गाँधी की अहिंसा – जैनों की अहिंसा की तुलना में लचीली और व्यावहारिक – उन्होंने स्पष्ट किया है कि किन परिस्थितियों में अहिंसा के नियम का उल्लंघन उचित है =>

① हिंसक पशुओं, रोग के कीटाणुओं, फसल को नष्ट करने वाले कीड़ों की हत्या उचित, शर्त यह है कि ऐसा सिर्फ समाज के हित में किया जाए

② अगर कोई प्राणी असहनीय दर्द झेल रहा है और उसकी मुक्ति का कोई और रास्ता न हो तो उसके जीवन को समाप्त कर देना उचित है, शर्त यह है कि ऐसा सिर्फ उसके हित में किया जाए (यूथेनेसिया का समर्थन)

③ चिकित्सक द्वारा शल्य चिकित्सा के लिए की जाने वाली हिंसा (सिर्फ मरीज के हित में सर्जरी)

④ अगर हिंसा और कायरता में से ही चुनना हो तो हिंसा करना उचित है

⑤ किसी प्राणी के नैतिक/आध्यात्मिक या भौतिक विकास के लिए उसे कष्ट पहुँचाना अहिंसा का उल्लंघन नहीं (माता-पिता द्वारा बच्चे में नैतिक मूल्य विकसित करने के लिए ~~थोड़ा – श्रम करने का~~ आदेश देना etc)

गाँधी जी के पंचव्रत => अहिंसा => गाँधी उपनिषद दर्शन पर आधारित ईशावास्यमिदं सर्वम् के विचार को मानते हैं जिसका अर्थ है कि जगत के कण-कण में ईश्वर है ईश्वर ही अलग-2 तरीके से विभिन्न मनुष्यों अन्य प्राणियों, पेड़ पौधों तथा भौतिक वस्तुओं में व्यक्त होता है, इन सभी अभिव्यक्तियों में स्वस्थ संबंध का होना नैतिक समाज की शर्त है, संबंधों को उचित रखने की मूल युक्ति है अहिंसा, अहिंसा सिर्फ राजनैतिक आंदोलन का अस्त्र नहीं है वह नैतिक जीवन जीने का मूलभूत तरीका है

=> अहिंसा का अर्थ -ive भी है, +ive भी, मन वचन कर्म से किसी भी प्राणी को कष्ट न पहुँचाना और कष्ट पहुँचाने का विचार भी न लाना इसका -ive अर्थ है जबकि +ive अर्थ में सभी प्राणियों के प्रति प्रेम, दया सहानुभूति और सेवाभाव रखना शामिल है

=> गाँधी की अहिंसा की विशेषता => (a) अहिंसा सिर्फ आदर्श नहीं है यह मानव जाति का प्राकृतिक नियम है जिस प्रकार हिंसा पशु समुदाय का प्राकृतिक नियम है वैसे ही अहिंसा मानव समुदाय का

(b) अहिंसा के पूर्ण पालन के लिए → ईश्वर में अटूट विश्वास जरूरी ईश्वरी विश्वास से मनुष्य समझ जाता है कि जिसके साथ वह हिंसा करना चाहता है वह भी ईश्वर का ही अभिव्यक्त रूप है वह ईश्वर के अलावा किसी से नहीं डरता क्योंकि ईश्वरीय इच्छा के बिना कुछ हो नहीं सकता

(c) अहिंसा अव्यवहारिक नहीं है वह एकमात्र व्यवहारिक मार्ग है हिंसा से तात्कालिक और एकपक्षीय समाधान हो सकते हैं किंतु स्थायी तथा सर्वस्वीकृत समाधान सिर्फ अहिंसा से ही सम्भव है

(d) अहिंसा और कायरता समानार्थक नहीं है अगर हमें हिंसा और कायरता में से किसी एक को चुनना हो तो हिंसा को चुनना बेहतर है, अहिंसा और कायरता में अंतर यह है कि अहिंसा बहुत ऊँचे और आध्यात्मिक स्तर पर होती है जबकि

(महात्मा गाँधी) → (प्रभाव)

Pantheism
⇒ जगत और ईश्वर एक है

निमित्तोपादानेश्वरवाद

Pan-en-the
⇒ ईश्वर का जगत है

⇒ Di-the
(केवल निमित्तेश्वर)

① उपनिषद दर्शन
↓
"ईशावास्यमिदं सर्वं,"
सब कुछ ईश्वर ही है और कुछ नहीं,

② गीता
⇒ स्वधर्म की धारणा
⇒ वर्ण व्यवस्था पर विश्वास

③ ⇒ ईसा मसीह का प्रभाव → करुणा → एक गाल पर तमाचा मारे तो दूसरा गाल भी आगे कर दो

④ ⇒ जॉन रस्किन का प्रभाव → unto the last → हिंद स्वराज पर प्रभाव (गाँधी जी की book है)

⑤ हेनरी डेविड थूरो का प्रभाव → सबसे अच्छा शासन वह है जो सबसे कम शासन करे।।
↓
अराजकतावाद

⑥ टालस्टॉय का प्रभाव → अराजकतावाद का समर्थन किया ⇒ राज्य की आवश्यकता नहीं

⑦ जैन, बौद्ध और योग दर्शन का प्रभाव ⇒ पँचव्रत का प्रभाव

=) मूर्ति पूजा, आडम्बरों का विरोध etc

"मनुष्यों के पापों की सजा स्वयं भोग कर उनकी मुक्ति को सम्भव

+ बोधिसत्व की धारणा महायान की सबसे क्रांतिकारी धारणा है, महायान के हीनयान से अधिक लोकप्रिय होने में इसका विशिष्ट योगदान है

(बौद्ध नीति मीमांसा)

① दर्शन का मूल उद्देश्य प्राणी मात्र के दुखों को दूर करने का प्रयास

② ईश्वर आत्मा, स्वर्ग, नरक आदि का निषेध करके इहलोकवादी नीति का विकास, हालांकि पुनर्जन्म और निर्वाण का विचार परलोकवाद से जुड़ता है (कुछ मात्रा में)

③ आत्म दीपो भव की भावना → प्रत्येक व्यक्ति की योग्यता में विश्वास करती है और उसे स्वयं अपने कष्टों से बाहर निकलने की सीख देती है

④ बोधिसत्व की धारणा → व्यक्ति को सीख देती है कि समाज के कष्टों को दूर करने में ही अपनी

प्रासंगिकता समझें

कुछ अन्य विचार ⇒ ① करुणा बौद्ध दर्शन के केंद्र में है जो सामाजिक जीवन को अच्छा बनाने की मूल शर्त है

② अहिंसा पर बल but जैन की तुलना में यह आदर्श व्यावहारिक है

eg ⇒ भोजन के लिए जीवहत्या गलत है but स्वाभाविक रूप से मृत पशु का ~~मांस खाना अनैतिक~~ नहीं है, खेती करते हुये हिंसा → क्षम्य है

③ अस्तेय तथा ब्रह्मचर्य जैसे मूल्यों पर भी बल

⇒ वर्ण व्यवस्था का विरोध करके समता मूलक समाज की स्थापना में योगदान

⇒ बुद्ध → नहीं चाहते थे संघ में महिला आये → सीमित रूप में ऐसा होने दिया

→ एक अर्थ में यह विचार प्रगतिशील नहीं दिखता, किन्तु तत्कालीन

अभाव || दुखों का कुछ दुख आयेगा ... हम ... करें ... के आ... प्रतीत ... का ... ⇒ मोक्ष ... हीनयान ... हैं ... अधिक ... प्राप्ति ... मरीचे ... ते अप... का स्वरू... जो ... स्वमुक्ति

(निर्वाण)

हीनयानी
⇓
अभावात्मक
⇓
दुखो का अभाव

...द दुखमय है तो
...आयेगा कहां से,
... हम दुखो को
...कर सकते है
...के आर्य सत्यो
...प्रतीत होता है

महायानी
⇓
→ भावात्मक
↓
निब्बानं परमं सुखं

(सामान्य बात)
(Common)
1) जीवन का उद्देश्य
2) अष्टांगिक मार्ग का use किया जाना चाहिए
3) 2 अवस्थाएँ
- निर्वाण → जीवन मुक्ति
- परिनिर्वाण → विदेह मुक्ति

...का बुझ जाना
...: मोक्ष की इच्छा रखने वाला

मुमुक्षु

...हीनयान
↓
...र्हत
...धि के चरण मे
...प्राप्ति
...म रीपो भव
...त अपने मोक्ष की
...स्वयं पूर्ण करता है
...किसी Help के,
...मुक्ति चाहता है

महायान → बोधिसत्व → विश्व मुक्ति

बोधिसत्व → मूल स्वभाव है महा करुणा से युक्त होना

1. बोधिसत्व चाहता है कि मोक्ष की अर्हता प्राप्त के बावजूद वह तब तक मोक्ष प्राप्त न करे जब तक विश्व के प्रत्येक प्राणी को मोक्ष न मिल जाए,
2. बोधिसत्व की धारणा मे एक अन्य धारणा imp है जिसे परिवर्त कहते है, इसका अर्थ है कि बोधिसत्व अन्य व्यक्तियों के कर्म फल का अपने कर्म से आदान-प्रदान कर सकता है वह दूसरो के बुरे कर्म अपने ऊपर लेकर तथा अपने अच्छे कर्म दूसरो को ... दे देता सभी को मुक्ति प्रक्रिया मे सहयोगी बनाता है, यह आदर्श सीमित रूप मे गीता के अवतारवाद, ईसाइयत के ईसा मसीह से मिलता है अवतार अधर्म का नाश करने के लिए आते है जो एक अर्थ मे मानव के कर्मफल के संतुलन का प्रयास है।

⇒ कुछ लोग पहले आर्यसत्य के कारण बुद्ध को निराशावादी कहते [illegible]
गलत है (coz) चार्वाक को छोड़कर सबने संसार का दुखमय [illegible]
यह है कि बुद्ध ने स्पष्ट घोषणा की (eg जोन्स ने कहा है [illegible])

- 3 प्रकार के दुखों से परिपूर्ण है (आध्यात्मिक, आधिदैविक, आधिभौतिक)

2) जगत को दुखमय मानना 1st आर्य सत्य है बाकि आर्य सत्यों में दुख के निदान की प्रक्रिया है अंतिम रूप से बुद्ध आशावादी है क्योंकि विचारों का अंत सुख के बिंदु पर करते है

- Dr राधाकृष्णन ⇒ भारतीय दर्शन केवल प्रारम्भ मे निराशावादी है अंत में नहीं

अष्टांगिक मार्ग ⇒

1. सम्यक दृष्टि ⇒ 4 आर्य सत्यों का ज्ञान → सुख और दुख को समझने की ताकत
2. सम्यक संकल्प ⇒ 4 आर्य सत्यों को पालन करने का निश्चय
3. सम्यक वाक ⇒ सत्य, प्रिय वचनों का use
4. सम्यक कर्म ⇒ बुरे कर्मों तथा हिंसा, स्तेय, ऐन्द्रिक भोग का परित्याग करना
5. सम्यक आजीविका ⇒ ईमानदारी से जीविकोपार्जन
6. सम्यक व्यायाम → बुरे भावों को मन से निकाल देना और शुभ भावों को स्थापित करना
7. सम्यक स्मृति ⇒ वस्तुओं के वास्तविक स्वरूप को समझना अर्थात शरीर को शरीर, चेतना को चेतना समझना इनमें से किसी को मैं न समझना
8. सम्यक समाधि ⇒ ऊपर के 7 चरणों के बाद व्यक्ति सम्यक समाधि के योग्य हो जाता है इसके अंतर्गत 4 अवस्था है, चौथी अवस्था मे ही निर्वाण की प्राप्ति होती

चारो आर्य सत्यो का क्रम वैज्ञानिक है लक्षण से शुरू करके कारणो की पहचान तथा निदान तक की प्रक्रिया है और निदान सभी के दुखो का होता है, so बुद्ध को महावैद्य कहा जाता है

(बौद्ध)

हीनयान — महायान

(बौद्ध)

चार आर्य सत्य

दुख दुख
दुखमय है
भी दुखमय
की प्राप्ति के लिए
को बनाये रखने मे
सुख हाथ से निकल
गा — फिर दुख।

दुख समुदय
दुख का उदय
दुख के मूल कारण की खोज की गयी है
(प्रतीत्य समुत्पाद) सिद्धान्त
12 कारण (चरण) मे दुख के कारण की खोज की है ||
द्वादशांग चक्र
अविद्या → मूल कारण

दुख निरोध
दुख रोका जा सकता है
इसमे भी है
अविद्या को Control करके दुख निरोध
||
निर्वाण (दुख निरोध)
अग्नि की तपन का समाप्त हो जाना

दुख निरोध मार्ग
(निर्वाण के लिए रास्ता)
अष्टांगिक मार्ग
स्वयं बुद्ध ने इसी मार्ग पर चलकर निर्वाण प्राप्त किया था

र मे दुखियो ने जितने आंसू बहाये है उसका जल महासागरो के जल से भी अधिक है।

अव्याकृतानि / अव्याकृत → बुद्ध ने तत्व मीमांसा के बहुत से प्रश्नो का Ans नहीं दिया और उन्हे
व्याकरण कहा अर्थात व्याकरण की भाषा मे इनका Ans नहीं दिया जा सकता
के पीछे दूसरा कारण यह भी था कि बुद्ध के अनुसार व्यक्ति का मूल उद्देश्य जगत के
मान दुखो का दूर करना है न कि व्यर्थ के प्रश्नो मे उलझना, उनका कथन
र से घायल व्यक्ति के प्रति हमारा कर्तव्य यह है कि हम उसका तीर निकाले और
के बल्कि यह पहला कि तीर किसने मारा, कब मारा और क्यों मारा,

स्यादवाद = जैनो की ज्ञान मीमांसा का एक प्रमुख सिद्धान्त है, जिसका अर्थ है कि सामान्य मनुष्यों का ज्ञान हमेशा एक विशेष ... के सापेक्ष होता है विभिन्न व्यक्तियों या विचारों मे झगड़ा तभी होता है जब वे अपने सापेक्ष ज्ञान को निरपेक्ष मान लेने की भूल कर बैठते हैं ... वे समझ जाए कि उनका ज्ञान सापेक्ष है और दूसरे का ज्ञान भी उनके अपने दृष्टिकोण से उचित है तो वे एक दूसरे के दृष्टिकोण के प्रति न केवल सहिष्णु हो जायेंगे बल्कि सम्मान भी करेंगे, उनके बीच चर्चा और ... संस्कृति विकसित होगी जो वैचारिक लोकतंत्र का मूल आधार है, ...

हिंदु व्यक्ति → हिंदु धर्म ही दुनिया का सबसे अच्छा धर्म है (निरपेक्ष ...

मुसलमान → इस्लाम ही सबसे अच्छा धर्म है

स्यादवाद का प्रभाव → समाज को समतामूलक बनाने की दृष्टि से इस्लाम एक अच्छा धर्म है, ईश्वर और मनुष्यों के संबंधों मे लचीलेपन की दृष्टि से हिंदुत्व एक अच्छा धर्म है, बल्कि सभी धर्म किसी न किसी दृष्टि से अवश्य श्रेष्ठ होंगे चाहे वे कारण हमें ज्ञात हो या नहीं॥

— ive → (4) मोक्ष की पारलौकिक धारणा पर आज के युग मे विश्वास कठिन

(5) दिगम्बर सम्प्रदाय → महिला को मोक्ष का Right नहीं → लैंगिक समानता की दृष्टि से प्रश्नचिह्न उपस्थित

...हिंसा

...के बाद भोजन न
...प्याज, लहसुन और
...के अंदर की अधिकांश
...न खाना (आलू,
...अदरक, प्याज)
...भी न खाना
...पर कपड़ा बाँधना.
...साँस लेने में या
...समय कोई जीव
...मारा जाए।
...को छानकर पीना।
...का use करना,
...का use न करना

मोक्ष का स्वरूप :- मोक्ष आनंद की अवस्था है
:- संकेत ऐसे है कि जैन विदेह मुक्ति के साथ जीवन मुक्ति को भी स्वीकार करते हैं, तीर्थंकर अपने जीवन में मुक्त हो गये थे।

(मूल्यांकन)

+ive

अहिंसा का मूल्य अत्यन्त व्यवहारिक 20वीं सदी में आतंकवाद, नरसंहार जैसे बढ़े हैं उनका समाधान अहिंसा से ही सम्भव है वर्तमान में पर्यावरण संकट और पशु अधिकारों के ... को देखते हुए भी अहिंसा प्रासंगिक है।

वितरण मूलक न्याय सुनिश्चित करने के लिए अपरिग्रह का मूल्य प्रासंगिक है अगर अमीर लोग धन के संचय से बचें। (बिल गेट्स ...) तो अपरिग्रह की यही भावना ... वर्गों के कल्याण में सहायक होगी
अस्तेय का अर्थ अगर व्यापक रूप में लें तो ... किसी के भी Rights को नहीं छीनना चाहिए
... सिद्धान्त मनुष्य - पशु सिद्धान्त, मानव-2 संबंध ... सिद्धान्त ... नैतिकता में आधारभूत महत्व रखता है, ... नक्सलवाद, आतंकवाद के मूल में यही ... ने नीतियों का हल

-ive

(1) ब्रह्मचर्य की धारणा मुश्किल और अनैतिक (अगर स्वाभाविक सुख प्राप्त करना अनैतिक ही था तो ईश्वर या प्रकृति ने मनुष्य को ऐसी इच्छाएँ दी ही क्यों या ईश्वर या प्रकृति अनैतिक है या उनके द्वारा दी गयी इच्छाओं का विरोध अनैतिक है, व्यवहार में कई बार देखा जाता है कि जो साधु ब्रह्मचर्य का पालन करते हैं वे भी इस आदर्श से विचलित होते हैं इससे इस आदर्श की अव्यवहारिकता का पक्ष मजबूत होता है

(2) जैन सिद्धान्त अत्यन्त कठोर है ये व्यक्ति से जीवन की सहज इच्छायें ही छीन लेते है,

(3) अपरिग्रह का सिद्धान्त पूँजीनिर्माण का असम्भव बना देता है जो सम्पूर्ण आर्थिक प्रगति का आधार है

5 नियम या आदर्श जिनका पालन प्रत्येक जैन अनुयायी या साधक के लिए करना जरूरी है

(पँचव्रत का सिद्धान्त)

5 महाव्रत

वही 5 नियम साधु, सन्यासी के लिए महाव्रत कहलाते हैं, महाव्रतों की अपेक्षा, अनुव्रतो की तुलना मे कठोर होती हैं इनके सम्यक पालन से साधक को मोक्ष की प्राप्ति होती है

5 अणुव्रत

वही 5 नियम गृहस्थो के कुछ लचीले और सरल रूप मे उपस्थित हैं जिन्हें अणुव्रत कहते हैं, इनका पालन करने से महाव्रतो के पालन की योग्यता पैदा होती है, मोक्ष, महाव्रतों के पालन से ही मिलता है

(5 व्रत)

अहिंसा

इसका -ve अर्थ है- मन, वचन और कर्म से किसी को भी कष्ट न पहुँचाना, कही-2 इसके +ve अर्थ, अर्थात छोटे से छोटे जीवो के प्रति करुणा रखने को भी मान्यता दी गयी है,

जैनो मे अहिंसा का विचार गाँधी की तुलना मे कठोर है, गाँधी ने अहिंसा के अपवाद स्वीकार किए हैं but जैनदर्शन प्राय: इसे निरपेक्ष रूप मे लेता है

गीता मे भी अहिंसा की वकालत है but कर्तव्य पूरा करने के लिए आवश्यक हो तो हिंसा करना उचित माना गया है और जैनो मे अहिंसा किसी भी कर्तव्य से ऊँची है,

सत्य

सत्य का अर्थ है मन वचन, कर्म से असत्य का त्याग कर देना, कथन ऐसे होने चाहिए जो न सिर्फ सत्य हो बल्कि मधुर भी हो;

अस्तेय

मन, वचन कर्म से किसी के धन सम्पति या वस्तु को नही चुराना अर्थात किसी को उसके अधिकार से वंचित न करना,

अपरिग्रह

इसका अर्थ है साधनो का संग्रह न करना - मन वचन, कर्म तीनो स्तरो पर संग्रह तथा संग्रहेच्छा का पूर्ण त्याग कर देना अपरिग्रह है

साधुओ के लिए अपरिग्रह निरपेक्ष स्तर पर है दैनिक use की वस्तुओ के प्रति भी संचय का भाव नही आना चाहिए, अणुव्रत में यह नियम कुछ लचीला है अपनी जरूरतो के लिए थोड़ा बहुत संचय अनुचित नही माना गया है but संचय के लिए अनुचित साधन का use गलत है

ब्रह्मचर्य

मन, वचन से वासना का त्याग कर देना, सिर्फ (ऐन्द्रिक वासनाओ नही बल्कि मानसिक बाह्य भोग तथा अन्य कामनाओ का त्याग कर देना) अणुव्रत मे इसका अर्थ है केवल पूर्णता का भोग करना ... लिए पर्याप्त है but ... 10 वर्ष से पूर्व कामेच्छा पूर्णनियन्त्रण तथा ... स्त्रीगमन और वैश्यागमन ...

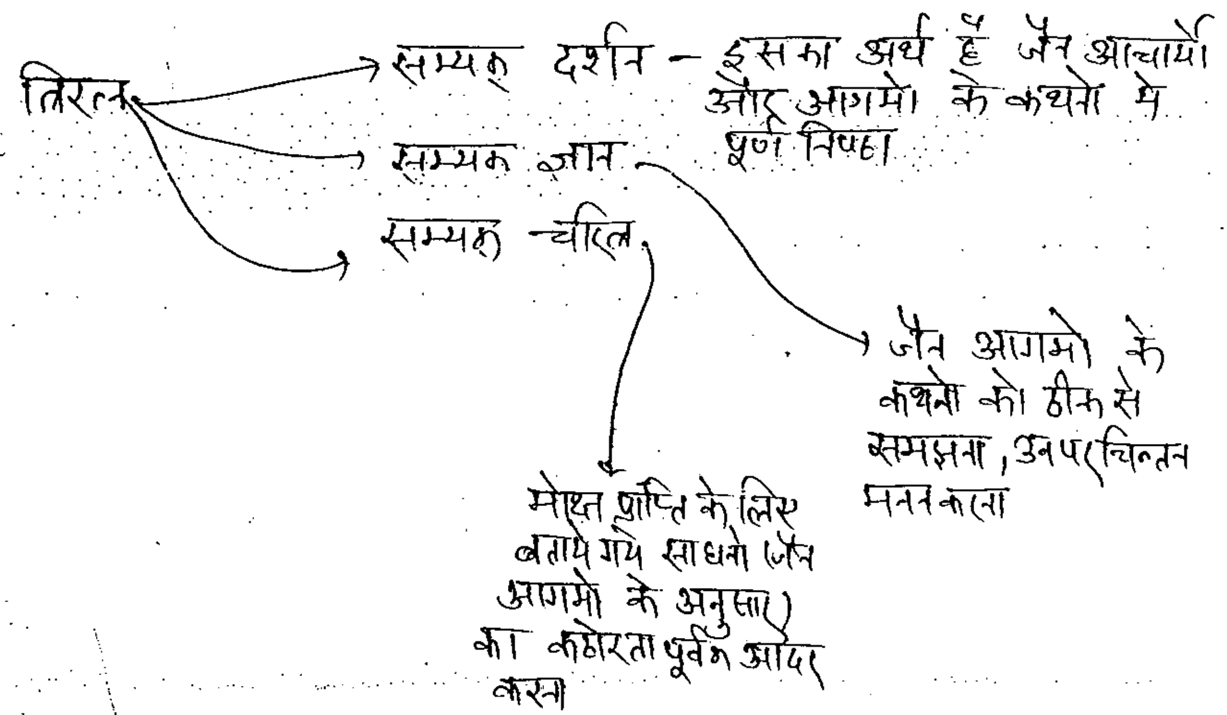

तुलना:- भारत के अधिकांश दर्शन मोक्ष के लिए या तो किसी। ही मार्ग की वकालत करते हैं या फिर किसी। को प्रमुख और बाकियों को सहायक मानते है, । शंकराचार्य ने एक मात्र रास्ता ज्ञान को माना है किन्तु भक्ति और कर्म को उसमें सहायक बताया है, इसी तरह रामानुज ने भक्ति को वास्तविक मार्ग तथा ज्ञान और कर्म को सहायक मार्ग बताया है

जैन दर्शन तीनों मार्गों को साथ लेकर चला है और उन्हें मुख्य और गौण में विभाजित भी नहीं किया है

=) गीता में कहा गया है कि साधक ज्ञान/कर्म या भक्ति किसी भी मार्ग में चलकर मोक्ष प्राप्त कर सकता है, गीता में तीनों मार्ग वैकल्पिक रूप में उपलब्ध हैं जबकि जैन दर्शन तीनों का समन्वय करता है.

=) जैन दर्शन में कहा भी गया है, :- रोगी को रोग से मुक्त होने के लिए 3 कार्य करने पड़ते हैं -(1) वैद्य या चिकित्सक के प्रति गहरी आस्था रखना
(2) चिकित्सक के निर्देशों को सटीक रूप में समझना
(3) " की सलाहों के अनुसार पूरी तरह आचरण करना

इसी प्रकार मोक्ष की प्रक्रिया भी इन तीनों तत्वों के समन्वय पर टीकी है

(जैन) → (हिन्दु और बौद्ध के बीच का[illegible]

परिचय: आत्मा (✓)
आत्मा की अमरता (✓)
बंधन, मोक्ष (✓)
पुनर्जन्म (✓)
कर्म सिद्धान्त (✓)

ईश्वर (✗)
अवतारवाद (✗)

(जैन नीति मीमांसा)

यज्ञ (✗)
साधकों और अनुयायियों को Non-veg खाने से मना करता है
(अहिंसा)

बंधन और मोक्ष

इसका अर्थ है कर्म फल की प्रक्रिया मे उलझे होना, हमारा जन्म इसलिए होता है क्योंकि कर्मों का फल पिछले जीवन की समाप्ति के बाद भी बचा रह गया था संसार में होना बंधन का परिणाम भी है और बंधन का कारण भी। परिणाम इसलिए, कि कर्मफल पूरा करने के लिए ही हम संसार मे है और कारण इसलिए कि संसार मे रहते हुये भी हम अपनी वास्तविक स्थिति को समझने के बजाए नयी-2 वासनाओं मे उलझकर कर्म करते रहते है और बंधन बढ़ता चला जाता है

प्रक्रिया: जैन आचार्यों ने बंधन से मोक्ष तक की प्रक्रिया को 5 चरणों में बाँटा है जिन्हे पदार्थ कहते है

- आस्रव → कर्मों का जीव की ओर बहना,
- बंध → कर्म मल का जीव को जकड़ लेना, अर्थात जीव कर्म बंधन मे बंध गया है
- संवर → पहले से मोक्ष की कोशिश Start होती है — संवर का अर्थ है नये कर्मों का आत्मा से जुड़ने से रोक देना
- निर्जरा → जो कर्म मल पहले से है उसकी सफाई करना
- [illegible] → कर्मों [illegible] विमुक्ति [illegible] मोक्ष प्राप्ति [illegible] मिल जाता है

पूरी न[illegible] आ[illegible] के अनुरूप है [illegible] भी

साधन: जैन दार्शनिकों ने मोक्ष के साधनों के मे कई पक्षों पर विचार किया है eg पंच[illegible] नैति[illegible]
(महाव्रत + अणुव्रत) त्रिरत्न, तीन गुप्तियाँ, 10 प्रकार के धर्म तथा 8 प्रकार के अहिंसा, से मुक्ति etc.

सुख मिलने की प्रक्रिया मे थोड़े दुख आते है, उनसे घबराकर सुखों को छोड़ना मूर्खता है
(काँटे के भय से मछली को छोड़ देना मूर्खता है)

(मूल्यांकन)

धूर्त चार्वाकों का ॥

अरिस्टीपस चार्वाकों के सबसे नजदीक,

→ निकृष्ट स्वार्थमूलक सुखवाद
- अर्थात सुखों मे गुणभेद नही है केवल मात्रा भेद है
- सिर्फ अपने सुखो का लोभ व अधम पक्ष पर अलग है (समाज के बारे मे कुछ नही)
- नैतिक सुख प्राप्त

निकृष्ट परार्थमूलक सुखवाद

मिल का सुखवाद → उत्कृष्ट परार्थमूलक सुखवाद

(मूल्यांकन)

+ive
- पूरी नीति मीमांसा इहलोकवादी है
- जो आधुनिक युग की मान्यताओं के अनुरूप है
- कर्मकांडो का विरोध करना एक आधुनिक दृष्टि है, विशेष रूप से
- लोगों को अनावश्यक दबाने से बचाने की कोशिश
- प्रकृति मे यथार्थ के नजदीक है, प्रायः माना हो गया है कि मनुष्य की सभी कोशिशे सुख प्राप्त करने के लिए प्रयास है

-ive
- समाज के प्रति जिम्मेदारी का भाव नही
- सुखभोग पर इतना बल देने से व्यक्ति की संवेदनशीलता नष्ट होने लगती है वह दूसरे के दुखो के प्रति चिंताशील नही हो पाता
- उधार लेकर घी पीने जैसे सिद्धान्त व्यक्ति को ऋण दुष्चक्र मे फंसा सकते है
- नारीवादी दृष्टि से देखे तो यह नीतिमीमांसा सिर्फ पुरुषो के पक्ष मे, नारी को इसमे सिर्फ भोग्य वस्तु के रूप मे देखा गया है

बलि → ब्राह्मण → बलि वाला पशु सीधे स्वर्ग जाता है।

अगर बलि वाला पशु सीधे स्वर्ग जाता है तो ब्राह्मणों को चाहिए कि वे अपने माँ-बाप की बलि दें ताकि वे सीधे स्वर्ग जाएँ = चार्वाक

मोक्ष = आत्मा को नहीं मानते so मोक्ष भी खारिज)

काम → काम → सभी प्रकार के सुख
- सुखवादी नीति मीमांसा

(यावत जीवेत सुखम् जीवेत् ... ऋणं कृत्वा घृतं पीवेत ... भस्मीभूतस्य देहस्य पुनः आगमनं कुतः)

धूर्त चार्वाक

- एकमात्र पुरुषार्थ
- सुखों में सिर्फ मात्रात्मक भेद को मानते हैं गुणात्मक नहीं।
  - ध्यान, योग
  - परोपकार
  - Maths Reasoning
  - पान मदिरा

बेंथम ने भी यही कहा

- जिसका अर्थ है व्यक्ति को जिस सुख में ज्यादा आनंद मिलता है व्यक्ति को उसी सुख की प्राप्ति करनी चाहिए।

eg = मदिरापान का सुख और ध्यान सुख किसी भी तरह भिन्न कोटि के नहीं हैं।

"पीत्वा-पीत्वा पुनः पीत्वा, यावत्पतति भूतले,"

- तत्काल सुख का महत्व बाद में मिलने वाले बड़े सुख से बेहतर है
- अभी मिलने वाला निश्चित सुख, बाद के अनिश्चित सुख से बेहतर है।
- हाथ की एक चिड़िया, झाड़ी के अंदर की 2 चिड़ियों से बेहतर है।
(आज जो कबूतर हाथ में है वो बेहतर है कल मोर मिलेगा यह

सुशिक्षित

- इन्होंने मान लिया कि सुखों में गुणात्मक भेद भी होता है।

॥

वात्स्यायन सुशिक्षितवादी

Date 4/11/2013

(भारतीय नीति मीमांसा)

(चार्वाक)

परिचय → original text उपलब्ध नहीं
→ जो जानकारी है अन्यदर्शनों द्वारा की गयी आलोचना के कारण है

लोकायत → लोगों में प्रसिद्धि के कारण
बृहस्पत्य दर्शन → बृहस्पति नाम व्यक्ति द्वारा उत्पत्ति

- Epistemology → (प्रत्यक्ष, ज्ञानेन्द्रियों से मिलने वाला ज्ञान)
- Meta Physics → परलोक का खंडन किया → स्वर्ग, नरक नहीं, आत्मा की अमरता नहीं, पुनर्जन्म नहीं → गीता से तुलना ⇒ ईश्वर से विरोध
- Ethics → वेद ⇒ सुख, उपनिषद ⇒ संयम → सुखवाद (Hedonism)
  → चार्वाक 2 समूह में बंटे
  - धूर्त (Knave) → (मुख्य परम्परा)
  - सुशिक्षित (Cultural) → (काम गौण)

(चार्वाक → नीति मीमांसा)

"कामेवः एकः पुरुषार्थ"

पुरुषार्थ विचार
- काम
- अर्थ → साधन रूप में उपयोग और जीवन में लक्ष्य नहीं
- धर्म → मानसिक रोग, (ब्राह्मणों का षडयंत्र) → श्राद्ध ⇒ श्राद्ध करना मरे घोड़े को घास खिलाने के बराबर है। जब नीचे की मंजिल पर रखा हुआ भोजन ऊपर की मंजिल तक भी नहीं पहुंच पाता तो स्वर्ग में कैसे पहुँचेगा।
  → बलि
- मोक्ष → मोक्ष को खारिज किया (मृत्यु ही मोक्ष है)। "मरणं एव अपवर्गः"
  मृत्यु के बाद कुछ नहीं है
  मृत्यु ही मारे अस्तित्व का पूर्ण अंत

गीता

(3) कर्म कठोरता सहज मानवीय भावनाओ के लिए अवकाश बना हुआ है

(4) नैतिकता में कुछ अपवादो को भी स्वीकार किया है (लेकिन जब मे De-ontralogy पर Telelogy भारी पड़ रही है) जैसे हिंसा नही करनी चाहिए किन्तु कर्तव्य के लिए जरूरी हो तो उसे स्वीकार किया जा सकता है

(कांट)

(3) कठोरवाद है सहज [illegible] भावनाओ का दुर्पयोग नहीं

(4) De-ontraulogy चरम [illegible] नैतिक नियमो मे किसी अपवाद स्वीकृति नही

(1)

(2)

(मूल्यांकन) ① आम तौर पर यह सम्भव नहीं है कि किसी कर्म के मूल में कोई कामना न हो तब भी अगर व्यक्ति सीमित मात्रा में भी इस आदर्श की उपलब्धि कर ले तो मानसिक स्तर पर अत्यधिक परिपक्व हो सकता है (E.I)

② स्थितप्रज्ञ होना पूर्णतः भले ही सम्भव न हो but वह ऐसा आदर्श जरूर है कि उसकी ओर जितना हो सके बढ़ते रहना चाहिए, जीवन में सुखों और दुखों से बचना सम्भव नही है but उनके -ve प्रभावों से बचा जा सकता है और अपने मन को ऐसी संतुलित स्थिति में लाने का अर्थ, यही है कि स्थितप्रज्ञ की ओर बढ़ा जाए

③ वर्णव्यवस्था अब प्रासंगिक नहीं (स्वधर्म की धारणा)

④ ~~पारलौकिक मोक्ष~~ की धारणा प्रासंगिक नहीं

(गीता और कांट) (समानता) ① फल की आसक्ति का विरोध (कर्तव्य, कर्तव्य के लिए)

② मन और इंद्रियों का नियमन

③ भौतिक सुखों की जगह आध्यात्मिक सुखों पर बल

④ दोनों संकल्प स्वातंत्र्य के समर्थक हैं, दोनों मानते हैं कि (freedom of will) मनुष्य के आचरण उसकी स्वतंत्र इच्छा शक्ति के परिणाम अतः वह अपने कर्मों के लिए जिम्मेदार

(अंतर) गीता	कांट
① ईश्वर ईश्वर पर आधारित (ईश्वर ने स्वयं ... का प्रतिपादन किया)	① ईश्वर स्वयं नीतिशास्त्र पर निर्भर है क्योंकि नैतिक सिद्धान्त ग्रंथों में ईश्वर का अस्तित्व नहीं माना है उनकी धारणा है कि निश्चय ही नैतिक व्यवस्था चलाने के लिए ईश्वर के अस्तित्व में आस्था रखी जानी चाहिए
② कर्म फल की आकांक्षा के बिना करना है but फल मिलना जरूर ... निश्चित	② फल मिलने की कोई गारंटी नहीं सिर्फ

कर्म 2) गीता मे कर्म की धारणा स्पष्ट करने के लिए स्वधर्म शब्द का उल्लेख है। इसका अर्थ वर्णानुसार कर्म से है अर्थात व्यक्ति अपने वर्ण के अनुसार ही कर्म करना चाहिए, अर्जुन के क्षत्रिय धर्म को उद्‌बोधित करने की प्रक्रिया मे कृष्ण ने स्वधर्म की धारणा पर बल दिया है, स्पष्ट है कि गीता मे वर्णधर्म को महत्व तो दिया गया है किन्तु वर्ण, वर्ण अनुसार विभाजन कार्यो को ऊँचा या नीचा नही माना गया है, साथ ही वर्णो का निर्धारण जन्म से नही कर्मो के अनुसार माना गया है

गीता के 14वे अध्याय के 13वे श्लोक मे कहा है कि विभिन्न वर्णो, मनुष्यो का विभाजन उनके गुणो तथा कर्मो के आधार पर किया गया है इसे जन्म के आधार पर नही।।

(स्थितप्रज्ञ) गीता के उपदेश मे स्थितप्रज्ञ की धारणा अत्यन्त imp है निष्काम कर्म योग का पालन करने वाला व्यक्ति ही स्थितप्रज्ञ कहलाता है, इस कठिन मार्ग पर चलने की शर्त है कि व्यक्ति अपने मन तथा इंद्रियो को पूर्णतः संयमित कर ले और फल/आसक्ति को त्याग दे,

गीता के दूसरे अध्याय के 55वे, 56वे, तथा 57वे श्लोको मे कृष्ण कहा है कि, "जिस मनुष्य ने अपनी समस्त मनोकामनाओ को नियन्त्रण मे कर लिया है, जो लाभ-हानि, जय पराजय, तथा सुख दुख जैसी विरोधी स्थितियो मे समभाव रखता है अर्थात सुखी/दुखी नही होता और किसी के प्रति राग द्वेष से मुक्त रहता है, वही स्थितप्रज्ञ है

(मोक्ष मार्ग) 3) तीनो मार्ग उचित है, हालांकि ऐसा लगता है कि कर्म मार्ग को केन्द्रीय महत्व दिया गया है

गाँधी और तिलक ने एक श्लोक के आधार पर दावा किया है कि गीता कर्म मार्ग को सर्वश्रेष्ठ बताती है; यह श्लोक 4थे अध्याय का 12वां है जिसमे आया है कि, "निरन्तर अभ्यास से ज्ञान बेहतर है, ज्ञान से भक्ति बेहतर है और भक्ति से बेहतर है कर्मो के फल की आकांक्षा छोड़ना।"

इस श्लोक को छोड़ दे तो सामान्य तौर यही बात निकलता है कि प्रत्येक मनुष्य अपने स्वभाव के अनुसार मार्ग का चयन करने के लिए free

गीता (Ethics)
↓
(महत्वपूर्ण योगदान)

- निष्काम कर्मयोग
- स्थितप्रज्ञ
- अवतारवाद
  - इसका संबंध भी नैतिक कर्म से है

निष्काम कर्म योग =>

सामान्य अर्थ => इसका अर्थ है कि व्यक्ति को निष्काम भाव से अर्थात फल की इच्छा नहीं रखते हुये केवल अपने कर्तव्य कर्म पर बल देना चाहिए यहाँ योग का अर्थ मार्ग से है, समग्रता में कहें तो निष्काम कर्मों का मार्ग ही व्यक्ति को बंधन से मुक्ति की ओर ले जाने में सक्षम है यह सिद्धान्त भारतीय दर्शन में कर्तव्यवाद (Deontology) का प्रतिनिधि सिद्धान्त है जिसकी तुलना जर्मन दार्शनिक कांट के, "कर्तव्य के लिए कर्तव्य सिद्धान्त" से की जाती है

निष्काम का अर्थ => गीता में कहा गया है कि यद्यपि प्रत्येक व्यक्ति को कर्म के अनुसार फल अवश्य मिलता है but नैतिकता का तकाजा है कि व्यक्ति फल के लोभ के लिए कर्म न करे, वह सफलता और असफलता से अविचलित रहे।। गीता के दूसरे अध्याय के 47वें व 48वें श्लोक में कृष्ण ने कहा है कि "तुम्हारा अधिकार कर्म करने पर ही है उसके फल पर नहीं अतः फल की इच्छा से प्रेरित होकर तुम्हें कोई कर्म नहीं करना चाहिए, बल्कि आसक्ति से समभाव रखते हुये तथा फल की आकांक्षा का त्याग करते हुये तुम कर्म करो यही कर्मयोग है,"

निष्काम कर्म की स्थिति में आने के लिए मानसिक नियन्त्रण और इंद्रिय संयम जरूरी है, कृष्ण ने कहा है कि यद्यपि मन अत्यन्त चंचल है और उसकी गति वायु से भी तेज है तब भी निरन्तर अभ्यास और वैराग्य द्वारा उसे नियन्त्रित किया जा सकता है

(गीता)

- परिचय
  - महाभारत का एक अंश (उपदेश के रूप में कृष्ण का अर्जुन को)
- हिंदु दर्शन का सबसे महत्व हिस्सा
- व्याख्याएँ
  - अद्वैत वेदांत → शंकराचार्य → ज्ञान मार्ग
  - वैष्णव वेदांत → रामानुज → भक्ति मार्ग
  - नव्य वेदांत → गांधी → अनासक्ति योग → कर्म मार्ग
    - (तिलक → गीता रहस्य) → कर्म मार्ग
- वेदांत दर्शन के महत्वपूर्ण दर्शनों → प्रस्थानत्रयी
  - उपनिषद
  - ब्रह्मसूत्र (बादरायण)
  - गीता

(गीता)

(Ethics)

- उपनिषद से
  - कर्म → पुनर्जन्म → आत्मा की अमरता
- उपनिषद से
  - वर्ण व्यवस्था → स्वधर्म → (फैसला जन्म से नहीं कर्म से)
  - आश्रम
  - पुरुषार्थ
- metaphysics
  - एकेश्वरवाद
  - अवतारवाद
    - (विष्णु)
    - ईश्वर अवतार लेकर आते हैं..

(सत्यमेव जयते — माण्डूक्य उपनिषद से है)

उपनिषदों में अन्तर्मुखी नैतिकता के विकास का एक कारण यह भी था कि इस दौर में ब्रह्म और मनुष्य के एकत्व को मान लिया गया, कि उपनिषदों में कई महावाक्य हैं:-

=) अहम् ~~ब्रह्मा~~ ब्रह्मास्मि

=) तत् त्वम् असि (तुम ही वह हो) (ब्रह्म)

इसका अर्थ था कि प्रत्येक मनुष्य के भीतर ब्रह्म की सत्ता विद्यमान है ऐसी धारणाओं में व्यक्तियों को भीतर से नैतिक होने के लिए प्रेरित किया

- (उपनिषद) → वेदों के अंतिम हिस्से / वेदांत
  - दार्शनिक व्याख्याएँ
  - मुंडक, कठ, तैतरीय, मांडूक्य etc.
- वेदो की तुलना में metaphysical अंतर
  - वेदो में
    - बहुदेववाद
      - Henotheism
      - प्राकृतिक शक्तियों को देवता मानने की प्रवृत्ति
      - "कस्मै देवाय हविषा विधेम"
  - उपनिषद
    - (एकेश्वरवाद)
      - ब्रह्म की धारणा
    - पारलौकिक रुचियाँ बढ़ने लगी
- नीति मीमांसा
  - Nature of Ethics
    - अंतर्मुखी नीति मीमांसा
      - किसी बाहरी दबाव के कारण नहीं बल्कि आंतरिक प्रेरणाओं के आधार पर नैतिक होने की प्रक्रिया
    - निवृत्तिमार्गी
      - = भौतिक सुखों की जगह आध्यात्मिक सुखों पर
      - ⇒ भोग पर, संयम बल
- (अवधारणा)
  - पुरुषार्थ
    - वेद : (4)
    - धर्म → उपनिषद
  - आश्रम
    - संन्यास
  - (वैदिक साहित्य की तरह Same)
    - वर्ण
    - कर्म

धारणा

- **ऋत**
  - सम्पूर्ण विश्व मे एक नैतिक व्यवस्था विद्यमान है उसी के अनुरूप सभी नैतिक प्रश्नो का निर्धारण है
    - पूर्णतः वस्तुनिष्ठ
- **पुण्य**
  - जो अच्छे कर्म या सद्गुण है, शुभ की प्राप्ति मे सहायक,
  - सत्य बोलना माता-पिता, गुरु की सेवा, सभी प्राणियो पर दया करना
- **पाप**
  - जो अशुभ मे सहायक है
    - झूठ बोलना
    - चोरी करना
    - देवी, देवताओ का अपमान

ऋण

- देव ऋण
- ऋषि ऋण
- पितृ ऋण

व्यक्ति अपने नैतिक कर्तव्यों को न भूले so वैदिक मीमांसा में ऋण की धारणा विकसित की गयी, व्यक्ति पर शुरू से ही 3 ऋण होते जिन्हें चुकाना उसका धर्म है, इन्हें चुकाये बिना उसे मुक्ति नहीं मिल सकती।

देव ऋण → ईश्वर के प्रति ऋण
→ विभिन्न अनुष्ठान से चुकाया जाता है

ऋषि ऋण → गुरुओं etc के प्रति ऋण।
→ उनकी आज्ञा मानना, आर्थिक सहायता करना etc (चुकाने के उपाय)

पितृ ऋण → अपने माता-पिता व अन्य परिवार ~~सदस्यों~~ के प्रति जिम्मेदारी (बुढ़ापे / असहायता में उनकी सेवा सहायता करना etc)

फायदा
- व्यक्ति अपने कर्तव्य नहीं भूलता
- जिस समाज में वृद्धों के लिए सामाजिक सुरक्षा की औपचारिक व्यवस्था न हो, वहाँ अगली पीढ़ी ही उनकी सुरक्षा का दायित्व निभा सकती है।

नुकसान
- दबाव बढ़ता है, कई बार झेलना पड़ता
- देव ऋण → प्रासंगिक नहीं
- ऋषि ऋण की धारणा ~~व्यक्ति को~~ अति आज्ञाकारी होना सिखाती है व विद्यार्थी को अध्यापक की तुलना में नीचे रखती है, (प्रश्न पूछने की मनाही आज्ञापालन पर बल)

16 संस्कार

||

3 जन्म से पूर्व → eg गर्भाधान (उत्तम संतान की प्राप्ति के लिए)

4 से 8 तक जन्म के बाद और शिक्षा की Starting से पूर्व ⇒ 5 वाँ ⇒ नामकरण
8 वाँ ⇒ चूड़ाकर्म

9 से 13 तक शिक्षा प्राप्ति से संबंधित → 11 वाँ ⇒ उपनयन

14, 15 → विवाह से संबंधित, |15 ⇒ पाणीग्रहण|

16 → (अंतेष्टी संस्कार)

(मूल्यांकन)

अच्छाई

1. जीवन में व्यवस्था बनी रहती है
2. विभिन्न उत्सवों के होने से व्यक्तिगत और सामाजिक जीवन में आनंद
3. समाजीकरण की प्रक्रिया ~~व्यवस्थित~~ (व्यवस्थित)

बुराईयाँ

1. कर्म कांड बढ़ता है
2. पुरोहितों के लिए लाभकारी गरीबों के लिए कष्टकारी
3. व्यवस्था इतनी मजबूत है कि नवाचार और लचीलेपन की सम्भावना कम हो जाती है
4. महिलाओं और अवर्णों के प्रति समानता की भावना नहीं eg - उपनयन संस्कार

वर्णाश्रम धर्म

- वर्ण
- आश्रम
  - ब्रह्मचर्य 25 → इंद्रिय संयम; अध्ययन विभिन्न कौशल सीखना
  - गृहस्थ 25-50 → विवाह, संतान की उत्पत्ति, जीवन के सामान्य सुख भोग (नैतिकता की परिधि में रहते हुये)
  - वानप्रस्थ 50-75 → संयम पूर्वक जीते हुए अन्य व्यक्तियों को नैतिक जीवन के लिए मार्ग दर्शन देना, आत्मचिंतन, ईश्वर चिंतन तथा शिक्षा कार्य, समाजसेवा करना
  - संन्यास 75--- → 75 वर्ष के बाद (सिर्फ मोक्ष प्राप्ति का उद्देश्य) भिक्षा मांगना - जीवित रहने का एक मात्र तरीका। मानव मात्र के कल्याण का प्रयास करना

संस्कार

संस्कार → संस्कार के अर्थ

- नैतिक मूल्य जो बार-2 अभ्यास से सद्गुण या आदत बन गये हैं
  ↓
  संस्कार बनने का अर्थ है कि व्यक्ति अब यह कार्य किसी निर्णय प्रक्रिया के आधार पर नहीं, बल्कि सोचे विचारे आदत के बिना ही करेगा।

  e.g Stage (1) बच्चे का माता-पिता के पैर छूना (बाहरी दबाव के कारण)
  Stage (2) बाहरी दबाव and but आदत नहीं पड़ी है - हर ऐसी स्थिति में, निर्णय करना और सोचकर फिर पैर छूना
  Stage (3) संस्कार की स्थिति जबकि कोई बाह्य दबाव बिना किसी सोच-विचार के उसके पैर छू लेना।

- जीवन की विभिन्न अवस्था → (वैदिक साहित्य में संस्कार यही है)

वैदिक साहित्य में कोशिश की गयी है, कि व्यक्ति के जीवन को विभिन्न नैतिक व्यवस्थाओं में बाँध दिया जाए, जिस तरह उसकी आयु के अनुसार 4 आश्रम बनाये गये हैं वैसे ही उसके जीवन को 16 अन्य चरणों में बाँधा गया है जिन्हें संस्कार कहते हैं

जु
सक
जीवन
↓
बौद्ध
अद्वैत वे
सांख्य,

अगर ये सभी स्थितियाँ होंगी तो इहलौकिक जीवन ही मोक्ष जैसा हो सकता है।

? मोक्ष कब मिलेगा ?

- जीतेजी मिल सकता है
  - जीवन मुक्ति → बौद्ध, अद्वैत वेदांत, सांख्य, योग
  - विदेह मुक्ति
- पहले मरना ही होगा
  - विदेह मुक्ति → न्याय, वैशेषिक, मीमांसा, वैष्णव वेदांत

(कर्म)

- संचित → जो कर्म पहले से एकत्रित हो → फल मिलना Start नही हुआ है।
- संचीयमान → जो कर्म अभी कर रहे हैं
- प्रारब्ध → ये भी पहले ~~...~~ संचित हैं but इनका फल मिलने की प्रक्रिया Start हो गयी है

(जीवन-मुक्ति में क्या होता है?)

∴ संचित कर्म जलकर राख हो जाते हैं

∴ जीवन मुक्त व्यक्ति जो भी कर्म करता है उनमे व्यक्तिगत लाभ की लालसा नही होती, गीता की भाषा मे इन्हे निष्काम कर्म कहते है और बुद्ध की भाषा मे अनासक्त कर्म, बुद्ध के अनुसार ये कर्म भुने हुए बीज की तरह होते हैं अतः फल उत्पादन की क्षमता नही रखते हैं।

∴ जीवन ~~मुक्ति~~ मुक्त व्यक्ति के संचीयमान कर्म नही होते,

∴ प्रारब्ध कर्मों का फल मिलना क्योंकि Start हो चुका है So यह प्रक्रिया बीच में नही रुकेगी, जीवन मुक्त व्यक्ति तब तक देह से युक्त रहेगा जब तक इनका कर्म ... देहपात के साथ ही वह विदेह मुक्त हो जायेगा।

वर्तमान समय में मोक्ष की प्रासंगिकता :-

(1) वर्तमान मे ऐसे अलौकिक उद्देश्यो का पर समाज का विश्वास ↓

(2) कुछ दार्शनिको ने मोक्ष की पारम्परिक धारणा पर प्रश्न खड़े किए हैं

(a) नारीवादियो ने सवाल उठाया है कि मोक्ष मार्ग केवल पुरुषो तक सीमित रहा है इसे परम/चरम पुरुषार्थ कहने पर उन्हें आपत्ति है (मोक्ष के विभिन्न मार्ग परिवार और समाज से कटने की माँग करते है जो महिलाओ के लिए सम्भव नही)
दिगम्बर जैन ग्रंथो मे स्पष्टतः कहा गया है कि महिलायें मोक्ष की अधिका. नही है

(b) मोक्ष की धारणा = उच्च वर्णो तक सीमित → अम्बेडकर, नवबौद्ध विचारो का आक्षेप

(c) समतामूलक समाज के अनुरूप नही

(3) यह व्यक्ति को परलोकवादी बनाती है, इहलौकिक विकास की सम्भावना ↓ हो जाती

मोक्ष की मेरी धारणा :-

(1) इहलौकिक

(2) विज्ञान तकनीक का विकास इस तरह हो कि मनुष्यो की अधिकांश बिमा का निदान सम्भव हो जाए तथा विभिन्न कष्ट समाप्त हो सके
eg- जल संकट, पर्यावरण संकट, भुखमरी संकट etc

(3) विश्व के सभी समाज एक ऐसी नीति मीमांसा को स्वीकार करे जिसमे निम्न लक्षण हो → (क) मानवमात्र की समानता → न लिंगभेद
→ न प्रजातिभेद
→ न वर्णभेद
etc

(ख) प्रत्येक व्यक्ति को इतनी आजादी हो कि वह अपनी रुचियो के अनुसार अपने जीवन को परिभाषित कर सके

(ग) मनुष्यो के अलावा प्राणीजगत/पेड़ पौधो के प्रति भी संवेदनशीलता का विकास हो

(घ) अन्तर्राष्ट्रवादी नैतिकता का विकास हो ताकि राष्ट्रवाद के नाम पर विभिन्न युद्धो etc से बचा जा सके।

मोक्ष

- 9 में से 8 दर्शन मोक्ष के समर्थक (चार्वाक नहीं है) → जीवन का चरम लक्ष्य मोक्ष है।
- नि: श्रेयस (निश्चित रूप से मंगलकारी)
- ⇒ निर्वाण ⇒ बौद्धों ने कहा
- ⇒ अपवर्ग
- ⇒ मुक्ति
- ⇒ कैवल्य ⇒ जैनों ने कहा

अर्थ

- कर्म बंधन से मुक्ति अर्थात् पुनर्जन्म चक्र से मुक्ति
- स्थायी अवस्था है जिसमें आत्मा अपने मूल अवस्था में आ जाती है।

स्वरूप

- भावात्मक धारणा (+ive conceptual Libration)
  - आनंद / सुख की प्राप्ति → अलौकिक आनंद
  - जगत पर उपलब्ध किसी भी सुख से गुणात्मक रूप से भिन्न
  - ⇒ जैन दर्शन, महायानी बौद्ध दर्शन, वेदांत
- अभावात्मक (-ive conceptual Libration)
  - दुखों का अभाव → हीनयानी बौद्ध, सांख्य, योग
  - चेतना ही नहीं होगी → न्याय, वैशेषिक, मीमांसा

मोक्ष कब मिलेगा (Page 182)

साधन

- ज्ञान → अद्वैत वेदांत, योग, सांख्य, वैशेषिक, न्याय
- भक्ति → वैष्णव वेदांत
- कर्मों से मोक्ष मिलेगा → मीमांसा दर्शन
- गीता → कोई भी मार्ग चुन लो (भक्ति/ज्ञान/कर्म)
- समन्वित → ज्ञान + भक्ति/श्रद्धा + कर्म ⇒ जैन
  - (त्रिरत्न) ⇒ सम्यक ज्ञान, सम्यक दर्शन (श्रद्धा), सम्यक चरित्र (कर्म)

(1)

"ध्रियते यः स धर्मः" ⇒ जो धारण किया जाए.

धरति धारयति वा लोकम् इति धर्म ⇒ धारण करने योग्य धर्म

धृतिः क्षमा दमोऽस्तेयम् शौचं इंद्रियनिग्रहः
धीर्विद्या सत्यं अक्रोधो दशकं धर्म लक्षणम्

धर्म के 10 लक्षण मनु के अनुसार
(1) धैर्य, (2) माफ करना, (3) मन का दमन (नियन्त्रण), (4) चोरी न करना, (5) सफाई से रहना
(6) इंद्रियों का दमन, (7) बुद्धि का प्रयोग, (8) पढ़ाई करना, (9) सत्य बोलना
(10) क्रोध न करना

धर्म और Religion में अंतर ⇒ मजहब / पंथ / सम्प्रदाय

धर्म
- पारम्परिक
  - नैतिकता → सामान्य कर्तव्य
  - वर्णसंबंधी दायित्व
- आधुनिक
  - नैतिकता → मित्रधर्म, पिताधर्म etc, आपद्धर्म
  - Religion / मजहब → हिंदू, ईसाई etc

Religion
- केवल धर्म से संबंधित
- परलोक का लक्ष्य केंद्र में

Re-ligion → पुनः बाँधना

⇓ ईश्वर और मनुष्य / आत्मा जो पहले एक साथ थे but मनुष्य की पापवृत्ति के कारण अलग हो गये, उस अलगाव को दूर करने के लिए अर्थात आत्मा और परमात्मा को पुनः आपस में बाँधने के लिए जो व्यवस्था है वह Religion है

मजहब / पंथ / सम्प्रदाय → वे सभी ... जो एक धा... रास्ते को चुन... (Same कर्मकांड, ...)

आपद्धर्म ⇒ आपत्ति की स्थिति में धर्म

(1) यहाँ धर्म ⇒ नैतिकता
अधर्म ⇒ अनैतिकता
(2) गाँधी इस धारणा के समर्थक थे ⇒
"धर्म विहीन राजनीति मृत देह के समान है जिसे नष्ट कर दिया जाना चाहिए ⇒ गाँधी

(1) नेहरू जो मानते थे कि इसे राजनीति से अलग होना चाहिए

साध... सभी ... सा...

पुरुषार्थ → जीवन के लक्ष्य क्या है
श्रेयस (मंगलकारी)

- धर्म
- अर्थ
- काम

→ वैदिक काल मे अधिक बल

- मोक्ष → वैदिककाल मे मोक्ष की धारणा थी
  → उपनिषदो मे अधिक बल,

अर्थ → धन / संपति को अर्जित करना, नैतिक उपायो से

काम → सीमित = यौन सुख
↓
व्यापक
↓
सभी प्रकार के सुख

धारण करनेयोग्य
↑
धर्म
↓
मनु

- साधारणधर्म
  ↓
  सभी के लिए समान
- विशेषधर्म
  ↓
  वर्णानुसार
  - ब्राह्मण → अध्ययन / अध्यापन
  - क्षत्रीय → सुरक्षा
  - वैश्य → वाणिज्य
  - शूद्र = सेवा करना

भारतीय निति मीमांसा

- => स्वतंत्र विषय के रूप में इसे कभी नहीं देखा गया
- => Metaphysics के भाग के रूप में इसका विकास
- => कोई पुस्तक नहीं है इसकी;

वैदिक नीति मीमांसा =>

परिचय
- → आरम्भिक रूप
- → चारों वेद

Nature of Ethics
- → प्रवृति मार्ग पर बल → सुखो पर बल → भौतिक / ऐंद्रिक सुखो पर बल
- → बहिर्मुखी नैतिकता (Extromestive ethics) → आंतरिक प्रेरणाओ से नहीं बल्कि बाहरी दबावो से (अधिक) नैतिक कार्य करने की कोशिश

नैतिक मान्यताएँ
- → कर्म सिद्धान्त
- → पुरुषार्थ
- → वर्णाश्रम धर्म
- → संस्कार
- → ऋण

कर्म सिद्धान्त

नैतिकता के ~~सिद्धान्त~~ क्षेत्र में कारण - कार्य सिद्धान्त को कर्म सिद्धान्त कहा जाता है (जैसा कर्म → वैसा फल)

↓

पुनर्जन्म सिद्धान्त → आत्मा की अमरता की धारणा
- → जिसको फल नहीं मिला है पुनर्जन्म होगा
- → कर्म सिद्धान्त को सही साबित करने के लिए

वेदोत्तर दर्शन

- ③ नास्तिक → वेदो को प्रमाणिक नही मानते है
  - ① चार्वाक
    - सुशिक्षित
  - ② जैन
    - श्वेताम्बर
    - दिगम्बर
  - ③ बौद्ध
    - हीनयान
    - महायानी
    - नव बौद्ध (अम्बेडकर द्वारा)
- ⑥ आस्तिक → वेदो को मानते है → हिंदु / षट्दर्शन / सनातन
  - ① सांख्य (कपिल)
  - ② योग (पतंजलि)
  - ③ न्याय (गौतम)
  - ④ वैशेषिक (कणाद)
  - ⑤ मीमांसा जैमीनी (जैमिनी)
  - ⑥ वेदांत
    - उपनिषद
    - गीता
    - अद्वैत वेदांत (शंकराचार्य)
    - वैष्णव वेदांत (रामानुज) (वल्लभ) (निंबार्क) (मध्व) (चैतन्य महाप्रभु)
    - नव्य वेदांत — महर्षि अरविंद, (गाँधी)

Date 2/11/2013

Philosophy

- ज्ञान मीमांसा (Epistemology)
  - ज्ञान क्या है?
    - प्रमा (सत्य ज्ञान)
  - स्रोत प्रमाण
  - ज्ञान की प्रमाणिकता का प्रमाण
- तत्व मीमांसा metaphysics
  - ज्ञान मीमांसा पर टीकी है, वास्तविकता की व्याख्या
    - सत्ता
      - है,
      - नहीं है
    - सत्ता का स्वरूप
  - ईश्वर मीमांसा
  - जगत/सृष्टि
  - आत्मा/चेतना
- नीति मीमांसा (Ethics)
  - व्यक्ति के जीवन का लक्ष्य क्या है।
    - निरपेक्ष (अंतिम) लक्ष्य
    - सापेक्ष (तात्कालिक)
  - साधन
    - निरपेक्ष के साधन
    - सापेक्ष के साधन

(भारतीय दर्शन)

- वैदिक दर्शन
  - 4 वेदों मे कहा गया
- वेदोत्तर दर्शन (वेदो के बाद का)